

श्री सद्गुरु वे नमः

# भक्ति सागर

कोटि नाम संसार में, तिनते मुक्ति न होय ।  
मूल नाम जो गुप्त है, जाने बिरला कोय ॥

—स्वामी मधु परमहंस जी



सन्त आश्रम रांजड़ी, पोस्ट राया, जिला जम्मू

# भक्ति सागर

–स्वामी मधु परमहंस जी

प्रचार अधिकारी

–राम रतन जम्मू

© SANT ASHRAM RANJARI (JAMMU)  
ALL RIGHTS RESERVED

**प्रथम संस्करण – दिसम्बर 2006**  
**प्रतियाँ – 5000**

**Website Address.**

[www.sahib-bandgi.org](http://www.sahib-bandgi.org)

**E-Mail Address.**

\*Santashram@sahib-bandgi.org

\*Sadgurusahib@sahib-bandgi.org

**प्रकाशक**

साहिब बन्दगी सन्त आश्रम राँजड़ी

पोस्ट राया, तहसील साम्बा

ज़िला–जम्मू

Ph. (01923) 242695, 242602

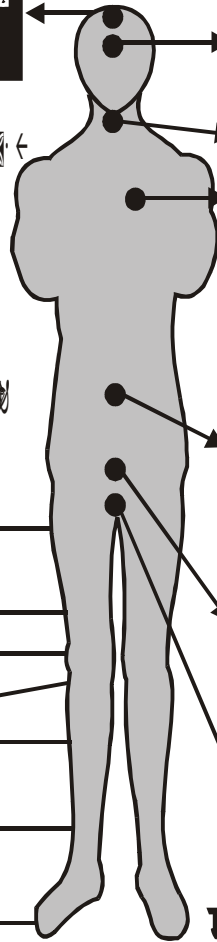
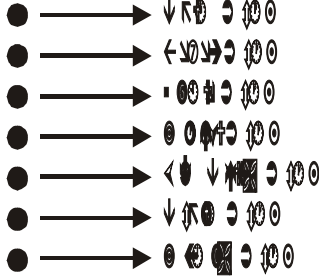
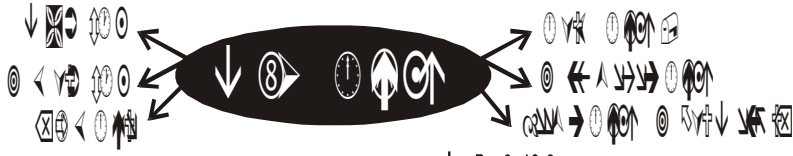
---

मुद्रक : सरताज प्रिंटिंग प्रैस, जालन्धर शहर।

## विषय-सूची

1. मरने वाले का पता	5
2. आत्म ज्ञान बिना नर भटके	7
3. धर्मदास को चिताया	26
4. बीरसिंह को चेताया	66
5. राजा जगजीवन को चेताया	84
6. अमरसिंह को चिताया	107
7. राजा भोपाल को चिताया	114
8. दसों दिशाओं में लागी आग	119





कंठ चक्र-यहाँ आद्य शक्ति का वास है

शिवलोक-यहाँ शिव और पार्वती जो का वास है, 70 प्रकार की अनहद धुने यहीं से उठती है तथा भंवर गुफा में सुनाई देती है। यही पर अग्नि तत्व है, जो **ज्योति निरंजन** (अलख निरंजन) से पैदा हुआ है।

विष्णु लोक-यहाँ विष्णु जी और लक्ष्मी जी का वास है। नाभि स्थान पर संपूर्ण शरीर का संचालन पेट ही करता है। वायु तत्व यहाँ पर है, जो **सोहं शब्द** से पैदा हुआ।

ब्रह्मलोक-(स्वादिष्ठान चक्र) यहाँ ब्रह्मा जी और **सावित्री** जी का वास है। यहां से संपूर्ण मैथुन सृष्टि का संचालन होता है। यहाँ जल तत्व है, जो **ओंकार (+)** से पैदा हुआ।

मूलाधार चक्र-(गुद्दा स्थान) यहाँ गणेश जी का वास है पृथ्वी तत्व यहाँ पर है, जो **सत् शब्द** से पैदा हुआ है।

**मानव शरीर में लोकों की रचना**

## 1. मरने वाले का पता

---

अंतकाल जब जीव का आवै । यथा कर्म तब देही पावै ॥  
हेठ द्वार जब जीव निकाशा । नरक खानि में पावै वासा ॥  
नाभिद्वार<sup>1</sup> से जीव जब जाई । चलचर योनि में प्रकटाई ॥  
मुख द्वार से जीव पयाना । अन्न खानि में तासु ठिकाना ॥  
सुआंस द्वार से जीव जब जाई । अंडज खानि में प्रकटाई ॥  
नेत्र द्वार जीव जब जाता । मक्खी आदि तन को पाता ॥  
श्रवन द्वार ते जीव जब चाला । प्रेत देह पाय ततकाला ॥  
दशम द्वार से जीव जब जाई । स्वर्ग लोक में वासा पाई ॥  
राजा होय के जग में आई । भोगे भोग बहु विधि भाई ॥  
11वे द्वार से जीव जब जाता । परम पुरुष के लोक समाता ॥  
बहुरि न इस भवसागर आता । फिर-फिर नाहिं गर्भहि समाता ॥

—कबीर साहिब जी

जब जीव का अंतिम समय आता है तो अपने कर्मानुसार ही वो दूसरा शरीर धारण करता है । मरने के उपरान्त कौन-सा जीव किस योनि में चला जाता है, इसकी पहचान बताते हुए साहिब जी कह रहे हैं कि यदि मरते समय मल-द्वार से प्राण निकल जाएँ तो वो जीव नरक में चला जाता है, क्योंकि वो है ही नरक का द्वार । उसकी पहचान है कि तब मृतक का मल बाहर आ गया होगा । फिर जिसके प्राण मरते समय मूत्र-

---

1. पेशाब द्वार

द्वार से निकल जाते हैं, वो जलचर योनि में जन्म लेता है। उसकी पहचान है कि तब मूत्र बाहर आ जाएगा। फिर जिसके मरते समय मुख से प्राण निकल जाएँ, वो अन्न खानि में जन्म लेता है; अन्न खानि का जीव कीड़ा बनता है। उसकी पहचान है कि मुख बहुत ऊँचा खुला हुआ-सा होगा मौत के समय; खुला रह जाएगा। इसी तरह जिसके प्राण मौत के समय नासिका द्वारा से चले गये, वो अण्डज खानि में जन्म लेगा; पक्षी आदि बनेगा। फिर जिसके प्राण आँखों के द्वारा से चले गये वो मक्खी आदि के शरीर में जाता है। उसकी आँखें मौत के समय खुली रह जायेंगी। इस तरह जिसके प्राण कान के द्वार से चले गये, वो उसी समय प्रेत-योनि में चला जाएगा। ऐसे मृतक के शरीर को देखकर ही डर लगेगा। फिर इसके प्राण अंतिम समय में दसवें द्वार से निकल जाएँ, वो स्वर्ग में चला जाता है और पुनः मृत्यु-लोक में आकर राजा बनता है। उस समय मृतक प्रसन्नचित मुद्रा में दिखाई देगा। फिर जिसके प्राण अन्तिम समय में 11वें द्वार से चले गये, वो इस भवसागर से सदा-सदा के लिए छूटकर वापिस परम-पुरुष के घर अमर-लोक में चला जाएगा।



**दसवें द्वार ते न्यारा द्वारा ।  
ताका भेद कहूँ मैं सारा ॥**

**नौ द्वारे संसार सब, दसवें योगी साधु ।  
एकादश खिड़की बनी, जानत संत सुजान ॥**

## 2. आत्म ज्ञान बिना नर भटके

वर्तमान में हम प्रतिस्पर्द्धा के युग में जी रहे हैं। हर क्षेत्र में यह चीज दिखाई दे रही है। नाना मत-मतांतर अपना समर्थन और दूसरों का खण्डन करके परम पद मोक्ष दिलाने का दावा करते हैं। ऐसे में विचारशील मनुष्य का कर्तव्य बनता है कि चिंतन करे। कि कौन-सा मार्ग ठीक है।

भक्ति में अपराध भी बहुत आ गया, राजनीति भी आ गयी, व्यवसाय भी आ गया। तीन चीजें बड़ी क्षति पहुँचा रही हैं। चारों तरफ भक्ति का वातावरण देख रहे हैं, पर लोगों में भक्ति की वृत्ति नज़र नहीं आ रही है। क्यों?

**नाना पंथ जगत में, निज निज गुण गावें।**

**सबका सार बताकर, गुरु मार्ग लावें ॥**

ऐसी दशा में आम आदमी दुविदा में है कि कौन सा पंथ, कौन सा मार्ग, कौन सा गुरु, कौन सा रास्ता उपयुक्त है। यूँ भी देखें तो बाहरी तौर पर प्रतिस्पर्द्धा है, जीवन यापन के लिए मनुष्य संघर्ष कर रहा है। आपके चारों तरफ गोष्ठियाँ, भंडारे, यज्ञ आदि का आयोजन हो रहा है। मैं विरोध नहीं कर रहा हूँ। पर कहीं प्रतिस्पर्द्धा, विशाल प्रचार-प्रसार देख रहे हैं। बावजूद इसके मानव में भक्ति की वृत्ति नज़र नहीं आ रही है। आज कहीं हम भटक चुके हैं। सबसे पहले हमें लक्ष्य देखना होगा। क्यों करें भक्ति! पहला लक्ष्य है मोक्ष। मुक्ति की प्राप्ति के लिए मानव भक्ति कर रहा है। ठीक-2 समझने की ज़रूरत है। कौन सी भक्ति से कल्याण हो सकता है। हम सब मुक्ति के लिए चेष्टा कर रहे हैं। यानी हम बँधे हैं। लगता है, सही में बुरी तरह से बँधे हैं।

आवश्यकता ही खोज की जननी है। जब तक हम बँधन को नहीं समझेंगे, छूटने का प्रयास नहीं करेंगे। मनुष्य बुद्धिमान है, वही काम करता है, जो लाभ के हैं। पहले जानना होगा कि मुक्ति की ज़रूरत है

क्या! मुक्ति शब्द ही छुटकारे का भाव रखता है। पहले बँधन को ठीक से समझना होगा। जब तक बीमारी को नहीं समझ पा रहे हैं तो इलाज ठीक से नहीं होगा।

निःसंदेह हरेक बँधन में है। हम सब किसी सीमा तक जानते हैं कि बँधन में हैं। बँधन क्या है; किसने बाँधा है! इस तरफ हम नहीं जा रहे हैं, क्योंकि मन माया में उलझे हैं। खास बात की तरफ चिंतन नहीं कर रहे। **‘कहैं कबीर किसे समझाऊँ, सब जग अँधा.....।’** चिंतन करना होगा कि क्या वास्तव में बँधन में हैं। किसने बाँधा है! छुटकारा कैसे मिले! यह चिंतन करना होगा। पहले देखते हैं—बँधन। डॉ० पहले रोग जानने की कोशिश करता है। पहले टेस्ट करता है कि रोग क्या है, फिर ज़रूर जानने की कोशिश करता है कि कारण क्या है। 90 प्रतिशत बीमारियाँ तो बच्चा माँ के पेट से लेकर आता है। तो डॉ० रोग के बाद रोग का कारण जानने की कोशिश करता है। फिर उपाय ढूँढ़ता है, दवा देता है और फिर उसकी निवृत्ति होती है। जब तक बँधन का कारण नहीं जानेंगे, मुक्ति नहीं मिलेगी। मौटे तौर पर कोई कहे कि कोई जंजीर नहीं लगी है तो कैद कैसी! वे यथार्थ बात की ओर चिंतन नहीं कर रहे। ज़रूर किसी ने बाँधा है। पहले चिंतन करना होगा गंभीरता से कि क्या बँधन में हैं! यदि हैं तो भी प्रयास नहीं कर रहे हैं तो घोर अज्ञानता होगी। शास्त्र कह रहे हैं कि मनुष्य ही मोक्ष का अधिकारी है, बाकी नहीं हैं।

**सुर दुर्लभ मानव तन पाया, श्रुति पुरान सद्ग्रंथन गाया।**

**साधन धाम मोक्ष का द्वारा, जेहि न पाय परलोक सँवारा ॥**

गोस्वामी जी भी मानस में इंगित कर रहे हैं। इसलिए पहले बँधन जानना होगा। **‘बिन रसरी सकल जग बँध्या।’**

हिंदू धर्म की तीन मान्यताएँ हैं—1. ईश्वर है 2. आत्मा अमर है 3. हम सब कर्मों के कारण ही जन्म मरण को प्राप्त हो रहे हैं। फिर इसके दो सिद्धांत हैं—1. सत्य और 2. अहिंसा। यह धर्म इंगित कर रहा है कि सत्य और अहिंसा अवश्यमभावी हैं। लक्ष्य एक है—**मोक्ष**। इसलिए



मुक्ति की प्राप्ति का संसाधन बोल रहे हैं। ऋग्वेद, स्मृतियाँ, ऋषि-मुनियों की वाणी आदि सब संदेश दे रहे हैं, संसाधन भी बोल रहे हैं। वेदानुकूल मोक्ष की प्राप्ति के लिए तन मिला है। मनुष्य! मानव तन पाकर बालब्रह्मचारी रहकर अपनी आत्मा को ईश्वर में मिला। पहला संदेश यह मिला। अर्थात् मनुष्य को आदेश दिया कि हे मनुष्य! बँधन में नहीं आना, शादी नहीं करना। भय, आहार, मैथुन, निद्रा तो पशु-पक्षी भी कर रहे हैं। ये सब भी विषय विकारों का मज्जा ले रहे हैं। जो सुख इंद्र-इंद्रानी के साथ स्वर्ग में ले रहा है, वो सूअर-सुअरनी के साथ कीचड़ में ले रहा है। कम-से-कम यह मानव तन इसके लिए नहीं मिला है। इसलिए माया में नहीं उलझो। मोक्ष प्राप्ति का रास्ता असाध्य हो जायेगा। यदि ऐसा न हो सके, शादी के बिना रह न सको तो शादी कर लो, देख लो, क्या है गृहस्थ जीवन! 25 साल से 50 साल की उमर तक गृहस्थ में रहकर देख लो; फिर वानप्रस्थ हो जाओ यानी गृहस्थ में रहकर भी सन्यासी। फिर विषय विकार नहीं करे। 50 साल की अवस्था हो जाने पर रक्त संचार वैसे भी कम हो जाता है। स्त्रियों का मासिक भी बंद हो जाता है। यह प्रकृति की ओर से इशारा है। इसका अनुकरण बाकी सब जीव करते हैं। कुत्ते को पता चल जाए कि कुत्तिया बाँझ हो गयी है तो उसके पास नहीं जाता।

भोग मानव की बड़ी भूल है। तो आदेश दे रहा है वेद कि वानप्रस्थ हो जाओ। यदि विषयों में रुचि रहेगी तो संसार को त्यागने की कोशिश नहीं करेंगे इसलिए इसे हटाओ मोह माया से मन को हटा लो। बेटे जवान हो चुके हैं, उनकी बहु के हवाले करके विरक्त हो जाओ। 75 साल तक अभ्यास करो, वानप्रस्थ रहो। फिर बाद में किसी रात्री के मध्य में पति-पत्नी उठो ओर विपरीत दिशा में चले जाओ। पति पश्चिम की ओर तथा पत्नी पूर्व की तरफ चली जाए। बहुत दूर तक निकल जाओ, ताकि कोई पहचानने वाला भी नहीं रहे। नहीं तो कोई पहचान वाला मिलेगा तो कहेगा कि घर में तुम्हारा बेटा बीमार है। तो मोह न जगने पाए। अज्ञात

जगह पर चले जाओ। फिर कोई घर भी न बनाए। क्योंकि सन्यासी हो चुके हो।

मुझे गोस्वामी का किस्सा याद आ गया। वो पत्नी से बड़ा प्यार करता था। एक बार उसकी पत्नी मायके चली गयी तो रातों-रात वर्षाकाल में गंगा जी को पार कर ससुराल में पहुँच गया। बस, ख्याल आ गया, किसी भी तरह मन पर नियंत्रण न कर सका, चल पड़ा। अब सामने से जाते शर्म आती थी, इसलिए पीछे के रास्ते से गया और आवाज़ दी। पत्नी ने आवाज़ पहचान ली और किवाड़ खोला। तुलसीदास भीग रहे थे पत्नी को गुस्सा आ गया, पूछा-कैसे आए? कहा-लकड़ी पर बैठकर गंगा जी पार की, तुम्हारे मायके वालों ने रखी होगी। पत्नी ने कहा देखूँ तो कौन सी लकड़ी पर बैठकर आए हो। जब वहाँ गये तो देखा, लाश थी। वाह! वासना का नशा तगड़ा था। पत्नी ने फिर पूछा कि बताओ, अंदर कैसे आए? कहा-तुम्हारे मायके वालों ने रस्सी जो लटका रखी थी; उसी के सहारे आया। जब वहाँ देखा तो साँप लटक रहा था। पत्नी ने गुस्से में कहा-

**हाड़ माँस की देह मम, तापर ऐसी प्रीति।**

**तासु आधि जो राम प्रति, अवश्य मिटहु भव भीति।।**

कहा-मेरे रज-वीर्य से बने हड्डी-माँस के शरीर से जितना प्रेम है, यदि इससे आधा भी प्रभु से होता तो कल्याण हो जाता। गोस्वामी ने पत्नी की फटकार से आहत होकर उसे छोड़ दिया, सन्यास ले लिया। काशी में रहकर वेद-शास्त्रों का अध्ययन किया और बहुत बड़ा विद्वान बन गया। तो जगह जगह घूमने लगा, ज्ञान देने लगा। एक समय अपने गाँव के समीप सत्संग कर रहा था। जब उसकी पत्नी को पता चला तो वो भी देखने गयी कि कितना ज्ञान हुआ है। सत्संग खत्म हुआ तो पत्नी पास गयी, कहा-

**पत्नी**

**: घर चलो।**

- तुलसीदास : मैं सन्यासी हूँ, मेरा कोई घर नहीं है ।  
 पत्नी : भोजन खिला दूँगी ।  
 तुलसीदास : मैं खुद बनाता हूँ ।  
 पत्नी : राशन बगैरह दे देती हूँ ।  
 तुलसीदास : वो भी साथ ही रखता हूँ ।  
 पत्नी : ईधन, गोबर, चूल्हा आदि ।  
 तुलसीदास : वो भी साथ हैं ।  
 पत्नी : लौटा, बर्तन आदि ।  
 तुलसीदास : वो सब भी साथ में लेकर घूमता हूँ ।  
 पत्नी : तो छोड़ा क्या तूने! पूरी गृहस्थी लादे घूम रहे हो और छोड़ा तो केवल मुझे । तुमने वानप्रस्त होकर रहना था घर ही रह सकते थे ।  
 तुलसीदास : तुमने पहले भी मुझे ज्ञान दिया था, आज एक और ज्ञान दे दिया ।

तो कहने का मतलब है कि फिर टी. वी. भी लगा है, ए. सी. भी लगा है, फिल्म भी देख रहा है तो कौन सा सन्यासी हुआ! उसे तो वस्त्र पहनना भी वर्जित किया। विलासी जीवन नहीं जीना है फिर। कहा—आत्मीय जीवन जीना। ऐसे मनुष्य के लिए समाज को कहा कि भोजन खिलाओ, अन्यथा पाप लगेगा। सन्यासी भिक्षा की प्रार्थना कर सकता है। तीन दिन तक कुछ न मिले तो किसी द्वार पर जाकर कहे—देवी भिक्षा। यदि न मिले तो चुपचाप चला जाए, दूसरे द्वार पर जाकर माँगे। पाँच घरों में जा सकता है। मिला तो खा ले, नहीं तो प्रभु इच्छा जान संतोष कर ले। संग्रह तो करना ही नहीं है। साहिब ने बड़ा प्यारा कहा—

**गाँठि दाम न बाँधइ, नारी से नहीं नेह ।**

**कबीरा ऐसे संत की, मैं चरणों की खेह ॥**

ऐसा नहीं कि सर्दी, गर्मी, बरसात के कपड़ें उठाए—2 घूमता फिरे।

नहीं तो उनको संभालने की चिंता भी रहेगी, रात को कोई उठा न ले जाए, यह भी सोचता रहेगा। ऐसा नहीं हो। केवल ब्रह्म का चिंतन हो। लोग तो भीख माँगकर जीवन यापन कर रहे हैं। ये सन्यासी नहीं, बल्कि भिखमँगे हैं। इस पर तो साहिब ने कहा—

**माँगन मरण समान है , मत कोई माँगो भीख ।**

**माँगन ते मरना भला, यह सतगुरु की सीख ।।**

अंत में जहाँ इच्छा होगी, वहीं जाओगे। कुछ लोग सोचते हैं कि अंत में मांगेंगे कि इंद्र बनूँ तो इंद्र बन जायेंगे। नहीं! आंतरिक इच्छा होनी चाहिए। यही बात वासुदेव ने अर्जुन से कही थी। तो अर्जुन ने कहा कि फिर तो बड़ा अच्छा है, मैं अंत में इच्छा करूँगा कि इंद्र हो जाऊँ तो झंझट खत्म है, मैं इंद्र हो जाऊँगा। वासुदेव ने कहा—नहीं अर्जुन! ऐसा नहीं होगा। मौत के समय नवीन इच्छाएँ नहीं आयेंगी। जहाँ तुम्हारा मन अभी प्रेरित है, वही इच्छाएँ मौत के समय उठेंगी। जिस ओर जीवन भर ध्यान रहा, उसी ओर प्रेरित होंगे। यह नहीं कि कष्ट में कहे कि हे भगवान! बचाओ

**सुख में सुमिरन करता नहीं, दुख में करता याद ।**

**कहैं कबीर वा दास की, कौन सुने फरियाद ।।**

संतत्व की धारा कह रही है, जहाँ हो, वहीं से शुरूआत कर लो तो मोक्ष की प्राप्ति हो जायेगी।

तो मुक्ति की ज़रूरत है। मुक्ति क्यों? क्योंकि बँधन में हैं। हम आप सबकी आत्मा बँधन में है। आत्मा है भी क्या! पक्का। जितने भी धर्म हैं, आत्मा को मानते हैं, किसी न किसी दृष्टि से मानते हैं। स्वर्ग-नरक सब कह रहे हैं। इसका मतलब है कि मौत के बाद कुछ बचता है, जो इन जगहों पर सुख-दुख भोगने जाता है। इसका मतलब है कि यह आत्मा बँधन में है। 'पराधीन सपनेहु सुख नाही।' जो भी बँधन में है, कभी सुखी नहीं हो सकता। आत्मदेव बँधन में है, मुश्किल में है।

**..कोठी बंगला कारों की, कमी नहीं जिनके पास में ।**

**वो भी यह कहते हैं , हम बड़ें दुखी संसार में ।।**

आत्मदेव कैद है यहाँ। यह कैसी है आत्मा! बड़ी निराली है। हम सब अपने बच्चों में अपने लक्षण देख रहे हैं, अपना रूप देख रहे हैं। आत्मा में परमात्मा का जलवा है। यह साधारण नहीं है। आत्मा बड़ी निराली है। परमात्मा आनन्दमय है तो आत्मा भी आनन्दमयी है। परमात्मा निर्मल है तो आत्मा भी निर्मल है। अंश अंशी की वृत्ति पर है। इसलिए आत्मा अमर है। परमात्मा निर्लेप है तो आत्मा भी निर्लेप है। वो नष्ट नहीं होता तो यह भी नहीं होती। किसी देश, काल अवस्था में उसका नाश नहीं तो आत्मा का भी नहीं। आत्मा जब अंश है तो ये गुण, स्वभाव इसमें भी हैं। पर जब हम आत्मा को शरीर के अंदर देख रहे हैं तो यह बड़ी दुर्दशा में दिखाई दे रही है, अपने नूर में नहीं है। काफी परेशान नज़र आ रही है आत्मा। जब भी व्यक्ति को देखते हैं तो आत्मा नज़र नहीं आ रही है। आत्म व्यवहार नहीं मिल रहा। इसी में आत्मा है, पर नज़र नहीं आ रही है। इतनी बुरी तरह से बाँधा गया है कि दिख नहीं रही है। बाँधने वाली ताकत बड़ी ख़तरनाक है। आदमी छल, कपट कर रहा है। यह आत्मा नहीं हो सकती है। आत्मा को कहीं बाँधा है। लोग जो अनिष्टकार्य कर्म कर रहे हैं, कतई आत्मा नहीं करने वाली ऐसा। इसका मतलब है, आत्मदेव का कुछ नहीं चल रहा है। उसे कोई मजबूर कर रहा है। हिंसा, मारकाट मनुष्य कर रहा है। यदि यही है आत्मा तो परमात्मा भी ऐसा ही होगा। नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। शास्त्रों में जैसा आत्मा का रूप वर्णित है, उसके अनुसार ऐसे कुछ नहीं करने वाली आत्मा। यानी कोई करवा रहा है आत्मा से यह सब। जब भी कोई कर्म करते हैं तो आत्मा का सहयोग है।

जिस तरह कोई पुराने वस्त्रों को त्याग कर नवीन वस्त्र धारण करता है, इसी तरह कर्मानुसार आत्मा नाना शरीरों को धारण करती है। अब सवाल उठा कि आत्मा को कर्म की ज़रूरत ही क्या पड़ गयी! पूरा पूरा अज्ञान। कर्मानुकूल नये शरीर को धारण कर रही है। कौन से कर्म कर रही है! पर ज़रूरत क्या पड़ी है कर्म की आत्मा को! शास्त्रानुसार आत्मा

स्त्री-पुरुष नहीं, शीतोष्ण से परे है, मन-बुद्धि से परे है, इंद्रियों से परे है। फिर आत्मा कर्म क्यों कर रही है! मनुष्य खेतीबाड़ी कर रहा है। यह तो शरीर के लिए हुआ। आत्मा का क्या वास्ता! आत्मा में मुँह नहीं, खा नहीं सकती। मनुष्य पाप-पुण्य दो तरह के कर्म कर रहा है। ये सब शरीर के लिए हैं। खेती क्यों कर रहा है! अनाज होगा, खायेगा, बेचकर धन प्राप्त करेगा। मनुष्य ने अजीब-2 कर्म किये। महज देह के लिए कर्म कर रहा है। घर बनाया तो किसके लिए! आत्मा को सदी-गर्मी नहीं लगती। घर की ज़रूरत है शरीर को। शरीर है माया। आत्म देव शरीर में उलझ गया, शरीर के धर्म का पालन करने लगा। घर में एक किचन इसने बनाई। आत्मदेव भोजन ही नहीं खाता तो किचन क्यों! फिर एक बाथरूम बनाया। वो भी शरीर के लिए। मल विसर्जन और नहाने के लिए। फिर एक बैडरूम बनाया। आत्मा सोती-जागती नहीं। इसलिए यह भी शरीर के लिए। फिर एक ड्राइंग रूम बनाया। फिर एक स्टोर बना लिया। यही सब तो है। आत्मा का तो कुछ भी नहीं है। आत्मा ने मान लिया कि मैं शरीर हूँ। व्यवहार से भी ऐसा कर रही है। फिर इसी शरीर की सुख सुविधाओं को हासिल करने के लिए आदमी ठगी, बेईमानी आदि कर रहा है। यह सब सुनने के बाद भी समझ नहीं आई। साहिब कह रहे हैं—

**देह धरे का दंड है, भुगतत हैं सब कोय।**

**ज्ञानी भुगते ज्ञान करि, मूरख भुगते रोय।।**

**‘आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहाँ फिरत मगरूरी में....।’**

इसी के लिए मानव छल-कपट करता है। इसी की संतुष्टि के लिए कर्म कर रहा है। आत्मदेव जुट गया। कोई इसे प्रेरित कर रहा है।

कर्म का कारण देही है। शरीर अनित्य, अधम है। आत्मदेव ने इसे नित्य मान लिया है। बड़ी समस्या है। बाँधने वाली ताकत शक्तिशाली है। साहिब ने कहा—

**कहैं कबीर किसे समझाऊँ, सब जग अँधा।**

**इक दुइ होवे उन्हें समझाऊँ, सबहि भुलाना पेट के धंधा ।।**

कह रहे हैं कि पूरी दुनिया अँधी है। सबको पेट का धंधा लगा हुआ है। सभी इसी क्रम में हैं।

**तन धर सुखिया कोई न देखा, जो देखा वो दुखिया ।**

**उदय अस्त की बात कहत हौं, सबका किया विवेका ।।**

**बाटे बाट सब कोई दुखिया, का गिरही का वैरागी ।**

**सुखाचार्य दुख ही के कारण, गर्भहि माया त्यागी ।।**

**योगी दुखिया जंगम दुखिया, तपसी को दुख दूना ।**

**आशा तृष्णा सब घट व्यापत, कोई महल न सूना ।।.....**

बड़ें-बड़ें आचार्य भी परेशान हैं। उन्हें डर है कि कोई महात्मा मेरे से आगे न बढ़ जाए।

सिकंदर एक महात्मा के पास पहुँचा, कहा-

**सिकंदर : विजय का आशीर्वाद दो ।**

**महात्मा : क्यों?**

**सिकंदर : विश्वविजयी होकर सुख से जीवन व्यतीत करूँगा ।**

**महात्मा : तो उसके लिए मार-काट करने की क्या जरूरत! मेरी कुटिया में आकर रहो, भक्ति करते हुए सुख-शांति से जीवन व्यतीत करेंगे ।**

इसी तरह वर्तमान में देख रहे हैं। साहिब कह रहे हैं कि शरीर धारण किये हुए किसी को सुखी नहीं देखा। कलयुग में महात्माओं के जितने ठाठ हैं, उतने किसी राजा के भी नहीं हैं। पहले महात्मा सन्यासी थे। पर अब स्थिति यह नहीं रही।

**कबीर कलयुग आ गया, साधु न पूजे कोय ।**

**कामी क्रोधी मसखरा, इनकी पूजा होय ।।**

कलयुग में मानव गुरु की खोज कैसे करता है ! गुरु ठाठ-बाट से रहने वाला चाहता है। उसके ज्ञान से, उसके त्याग से नहीं करता है उसका प्रचार। कहता है कि मेरा गुरु जी पहले फलाना ऑफिसर था, डॉ० था। यह कौन सी बड़ी बात है। बड़ी-बड़ी हस्तियाँ मिट्टी में मिल गयीं। फिर कहता है कि उनकी बीबी फलाने मिनिस्टर की बेटी है। वाह ! फिर तो बड़ें अच्छे गुरु जी मिल गये। ज्ञान को नहीं देखता है। यह नहीं देखता है कि कहाँ तक पहुँचा हुआ है। यह नहीं देखता है कि मुझे पार कर पायेगा कि नहीं। साहिब कह रहे हैं—

**बँधे को बँधा मिला, गाँठ छुड़ावे कौन।**

**अँधे को अँधा मिला, तो राह बतावै कौन।।**

**जाका गुरु है गीरही, चेला गिरही होय।**

**कीच कीच के धोवते, दाग न छूटे कोय।।**

तो इस तरह फिर कहते हैं कि इतनी प्रॉपर्टि है, इतने डेरे हैं। फिर आटे घूँथने की मशीन फॉरेन से आयी है। इतना ही नहीं गुरु जी का अपना हॉलिकाप्टर है। कहते हैं कि सच्चा गुरु मिल गया है। यानी बाहरी उपलब्धियाँ देखी जा रही हैं। पहचान गुणवत्ता नहीं रही। तभी तो कहा—

**जाका गुरु है गीरही, चेला गिरही होय।**

**कीच कीच के धोवते, मैल न छूटे कोय।।**

गुरु आत्मनिष्ठ नहीं हुआ है, बाहरी उपलब्धियाँ बतायी जा रही हैं। यही है प्रतिस्पर्द्धा। धर्म क्षेत्र में प्रतिस्पर्द्धा आ गयी। मेरे पास दो आदमी थे, मैं तब भी कह रहा था कि मेरा पंथ संसार का सबसे बड़ा पंथ है। मेरा किसी से मुकाबला ही नहीं है। जहाँ यह चीज़ है, वो परेशान रहता है। आदमी जीवन यापन के लिए बड़ें साधन बना रहा है। जैसे घर बनाता है तो रेता, बजरी आदि माल सॅप्लाई करने वाले पहुँच जाते हैं। आप कहते हैं कि हमने पहले से ही किसी और आदमी को कह दिया है। वो पूछता है किसको कहा है ! आप कहते हैं कि फलाने को। वो



कहता है कि उससे तो कभी मत लेना। वो तो ठग है, आप हमसे लो। आपने पेंट करवाना होगा तो पेंटर पहुँच जाता है। आप कहते हैं कि हमने तो पेंटर कर लिया है। वो भी पूछता है किसको किया है! आप कहते हैं कि फलाने को। वो कहता है कि उसे तो ब्रश भी पकड़ना नहीं आता। मैंने बड़ी-बड़ी कोठियों को पेंट किया है, आप मुझसे ही करवाना।

**हमने सोचा कि प्रतिस्पर्धा करनी ही नहीं है। मेरा किसी से मुकाबला ही नहीं है। जब मैं एक ही बात कह रहा हूँ कि जो चीज़ मेरे पास है, वो ब्रह्माण्ड में किसी के पास नहीं है तो मुकाबला किससे करना!**

चीन के एक दार्शनिक थे। उन्होंने घोषणा की कि मुझे कोई नहीं हरा सकता। रुस्तम में चाइना के कान में यह बात पहुँची तो महात्मा के पास आकर उन्हें समझाया कि देखो, मेरे पास बेल्ट है रुस्तम की, कोई भी चैलेंज करें तो मुझे उससे लड़ना पड़ता है; आप नहीं कहो ऐसा। यदि कहोगे तो मुझसे लड़ने के लिए तैयार हो जाओ। महात्मा ने कहा कि एक बार कहा न कि मुझे कोई नहीं हरा सकता। रुस्तम में चाइना ने कहा—तो लड़ने के लिए फलाने दिन तैयार हो जाओ। महात्मा के जो शुभचिंतक थे, उन्होंने पहलवान के पास जाकर कहा कि वे तो महात्मा हैं, उनसे क्या लड़ना, उनसे आशीर्वाद लो। पहलवान ने कहा कि मेरे पास बेल्ट है, उन्होंने चैलेंज किया है, उन्हें समझाओ कि अपना चैलेंज वापिस लो; यदि नहीं लेंगे तो मुझे तो लड़ना ही पड़ेगा। लोगों ने सोचा कि यह पहलवान है, महात्मा को जाकर समझाते हैं। वे महात्मा के पास पहुँचे, कहा कि उससे क्या मुकाबला करना। महात्मा अपनी बात पर अड़ा रहा, कहा—एक बार कहा न कि मुझे कोई नहीं हरा सकता। तिथि नज़दीक आती गयी, रोमांच बढ़ता गया। लोगों ने सोचा कि महात्मा सिद्धि शक्ति लगाएगा। बड़े लोग इकट्ठा हुए। पहलवान चिंताओं में डूबा हुआ समय से बहुत पहले ही रिंग पर चक्कर काट रहा था। महात्मा के चेलों ने भी फैलाया कि देखो, कैसे पटकता है अपनी शक्ति से। मुकाबले में सबको

टैंशन हो जाती है। पहलवान भी सोच रहा था कि चैलेंज किया है तो कोई बात तो होगी ही। तो 10 बजने में 5 मिनट रह गये, पर महात्मा का कोई अता-पता नहीं था। जैसे ही 2 मिनट रह गये, लंबे-लंबे कदम भरता हुआ महात्मा रिंग की ओर बढ़ने लगा। उसकी निर्भीक चाल देख पहलवान की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी। वो रिंग पर पहुँचा तो रैफरी ने दोनों का हाथ मिलाया। महात्मा ने हाथ भी बड़ी गरम जोशी से मिलाया। जैसे ही घण्टी बजी, महात्मा जी बैठ गये। पहलवान ने कहा कि उठो, लड़ो। महात्मा ने कहा कि आओ, मारो। पहलवान ने कहा कि ऐसे कैसे कुश्ती होगी! महात्मा ने कहा-मारो मुझे, कहो कि जीत गया। 10-15 मिनट ऐसे होता रहा। जब महात्मा नहीं उठा तो पहलवान वापिस जाने लगा। महात्मा ने कहा कि तभी तो कहा था कि मुझसे कोई नहीं जीत सकता। वो लड़ना ही नहीं चाहता था।

मैं देख रहा हूँ कि आचार्य लोग परेशान घूम रहे हैं। मैंने प्रतिस्पर्द्धा रखी ही नहीं। प्रतिस्पर्द्धा के कारण सभी परेशान हैं। आपको मालूम नहीं पड़ेगा कि किससे नाम लूँ। ऐजेन्ट भी रखे हुए हैं। जैसे एक कंपनी के ऐजेन्ट दूसरी की निंदा करके अपने माल को खरीदने के लिए कहते हैं। आपने दरवाजे बनवाने हैं तो लकड़ी का मिस्त्री भी आ जाता है। आप कहते हैं कि मैंने पहले से फलाने को किया हुआ है। वो कहता है कि उसके तो दादे को भी मिस्त्री का काम नहीं आता। मैं खानदानी मिस्त्री हूँ, मुझसे करवाओ। प्रतिस्पर्द्धा में एक-दूसरे को नीचा दिखाने की बात आ जाती है। इस प्रतिस्पर्द्धा में आदमी हैरान परेशान नज़र आ रहा है।

भक्ति क्षेत्र में यह प्रतिस्पर्द्धा ज़्यादा है। आदमी भ्रमित हो जाता है। फिर जहाँ भीड़ ज़्यादा देखता है, वहीं चल पड़ता है। पर याद रखना कि जिस तरफ लोग बेरोकटोक जा रहे हों, वहाँ न जाना। पक्का वहाँ कुछ गड़बड़ होगी। वो बड़ी दौलत इकट्ठी करना चाहता है। जहाँ के लिए लोग कहें कि नहीं जाना, बरबाद हो जाओगे, वो गंदा आदमी है, विचार

कर वहाँ निकल पड़ना। साहिब तो कह रहे हैं—‘**चारों ओर मार मार जो धाय, तब लालों के लाल कहाये।**’ जिस महात्मा को दुनिया ढूँढे कि मिले तो मार डालें, समझना कि ठीक है।

आदमी निर्णय नहीं कर पा रहा है कि किस महात्मा की शरण में जाकर आत्मा का कल्याण करें।

तो आत्मा बँधन में है। जिस ताकत ने इसे बाँधा, वो अपना बोध नहीं होने दे रही है। वो इससे इसकी इच्छा के विरुद्ध कर्म करवा रही है। जैसे बंदर बँधन में है तो बाजीगर उसकी इच्छा के विरुद्ध कर्म करवाता है। शेर बँधन में है तो इसे आग के गोले में से निकाला जाता है। शेर को आग से नफ़रत है। वो रोशनी से घृणा करता है। वो अँधेरी गुफाओं में रहना चाहता है। क्योंकि उसकी आँखों में ऐसा सिस्टम है कि रात के समय भी देख लेता है। दिन के समय उसकी आँखों की रोशनी कई गुणा बढ़ जाती है। तब वो देख नहीं पाता है, उसे चुभती है। इसलिए वो अँधेरी गुफाओं में रहना पसंद करता है। अब देखो, सर्कस वाला एक काम कर रहा है, उसे आग के गोले में से जंप करवा रहा है। आपको कोई जेल में बंद कर दे तो कैसा है! इसलिए किसी भी जीव को तंग मत करो। हमारे लिए तो मनोरंजन है, पर उन्हें पीड़ा होती है। ‘**जस नट मरकट को दुख देई, नाना नाच नचावन लेई।**’ काल पुरुष आत्मा को इसके स्वभाव के विरुद्ध काम करवाकर कष्ट दे रहा है। विषय आत्मा का स्वभाव नहीं, पर काल इसे विषयों में झोंक रहा है। साहिब बड़ा खरा कह रहे हैं—‘**सैयाद के काबू में हैं सब जीव विचारे।**’ ‘**एक न भूला दो न भूले, जो है सनातन सोई भूला।**’ जो मौज मस्ती करते हुए घूम रहे हैं, वो बँधन में हैं। उन्हें पता नहीं है। ‘**बिन रसरी सकल जग बँध्या।**’

‘**बच के निकल जा इस बस्ती से।**’ अनासक्त होकर सन्यासी हो जाओ। ‘**जीव पड़ा बहू लूट में, नहीं कछू लेन न देन।**’ यह बड़ी शातिर ताकत के हाथ में है। ‘**यह संसार काल को देशा। बिना नाम**

**नहिं कटे कलेशा ॥** 'कर्म कराए आप ही, कष्ट पुनि देवे जीव को।' यह तरंगें फेंकता है। उसके अनुसार ही आत्मदेव को करना होता है। हरेक काम में आत्मा शामिल हो रही है। इसका जादू तगड़ा है। पहली बात पता चली कि बँधन में हैं। किसने बाँधा? मन ने। और किसने? माया ने। मेरे नामी ही नहीं, सब जानते हैं, कहते हैं कि भाई, मन-माया के बँधन में हैं। पर चिंतन नहीं करते। साहिब कह रहे हैं—

**मन ही सरूपी देव निरंजन, तोहि रहा भरमाई।**

**हे हंसा तू अमर लोक का, पड़ा काल बस आई।।**

मन ने आत्मा को बाँधा। क्यों? कारण होगा। कोई दुश्मनी रखता है तो कोई कारण होता है। दो खिलाड़ी आपस में बेडमिंटन खेल रहे हैं तो हम एक को चुन लेते हैं कि यह जीते। हमारा किसी से कोई वास्ता नहीं है। दो देशों का क्रिकेट मैच चल रहा हो तो भी हम एक जीत चुन लेते हैं, हम चाहते हैं कि यह जीते। ऐसे ही कुछ खिलाड़ियों के लिए चुन लेते हैं कि यह स्कोर बनाए। आप अपना पक्ष ले लेते हैं। हो सकता है कि किसी में घमण्ड लगा तो उसका पक्ष नहीं लेते हैं। दूसरा कोई शील है तो उसके साथ हो जाते हैं। तेंदुलकर को हमारे देश में लोग बड़ा पसंद करते हैं। थोड़ा नज़दीक से देखें तो सौरव की उपलब्धियाँ भी कम नहीं हैं। सौरव ने बड़े शतक भी लगाए हैं, बड़े रन बनाए हैं, पर चयनकर्ता सौरव से वो भाव नहीं रख रहे। तेंदुलकर से वे खुश हैं। यदि वो कभी फार्म में नहीं भी हो तो भी उसे बाहर रखने का फैसला नहीं करते हैं। फास्ट बाउलर काफी हैं। शोएब के प्रति लोगों का नज़रिया ठीक नहीं है, क्योंकि वो कुछ ऐसी हरकतें कर देता है कि जो ठीक नहीं होती हैं। अगर आप किसी से घृणा करते हैं तो कोई कारण होता है, पक्ष लेते हैं तो भी कोई कारण होता है। मन आत्मा को भ्रमित कर रहा है तो कोई कारण है। इसके पास शक्ति है, हथियार हैं। काम, क्रोध आदि के हथियारों से मार रहा है। इसके पास बड़ी ताकतें हैं। बड़ें-2 तपस्वियों ने ज़ोर लगाया मन को नहीं जीत सके, आदमी आदमी की बात छोड़ो।

**कितने तपसी तप कर डारे, काया डारी गारा।**

## गृह छोड़ भये सन्यासी, कऊ न पावत पारा ।।

पहले आपको अज्ञान में रखा। बाँधने के लिए अज्ञान में रखना जरूरी था। आत्मा का ज्ञान होता तो कर्म करने थे क्या! किसी को मारना था क्या! आपने कुछ नहीं करना था। अज्ञान संसार की नींव है। नींव मजबूत होगी तो मकान अच्छा होता है, मजबूत बनता है। अज्ञान ही विश्व की आत्मा है। इसलिए काल ने पहले आत्मा को अज्ञान में रखा। आत्मा का ज्ञान नहीं है, इसलिए कर्म करवा रहा है। मन कहता है कि फलाने ने गाली दी, मारो। आप चले जाते हैं। आपको ज्ञान होता तो नहीं जाना था।

## आत्म ज्ञान बिना नर भटके , क्या मथुरा क्या काशी.....।

अज्ञान में रखा है मन ने। कहता है कि लहरसिंह ने गाली दी, मारो तमाचा। आत्मा ने अपने को शरीर मान लिया। गाड़ी में सब चीजें काम कर रही हैं। मुख्य चीज है—फ्यूल। विश्व की आत्मा ही अज्ञान है। नींद के बिना स्वप्न भी नहीं हो सकता, अज्ञान के बिना संसार नहीं चल सकता। आत्मा अपने को शरीर मान रही है। रुकावटें हैं। जब भी मन चाहता है, जो भी चाहता है, करवाए जा रहा है। बड़ें-2 आचार्य इसे नहीं जान पा रहे हैं। **‘जो कोई कहे मैं मन को देखा, उसकी रूप न रेखा। पलक पकल में वो दिखलाए, जो सपने नहीं देखा।।’** जब भी आत्म ज्ञान की तरफ जाओगे, यह रुकावट डालेगा। चोर अंधकार से प्रेम करता है। अंधकार उसका संरक्षक है। इसी तरह अज्ञान मन का संरक्षक है। अज्ञान में मन का पता नहीं चल पा रहा है। अज्ञान अंधकार से उत्पन्न हुआ। अंधकार आकाश तत्व से आया। सबके अंदर आकाश तत्व है, अंधकार है, अज्ञान है। पर उस देश में पाँच तत्व न होने के कारण अज्ञान नहीं है। जब तक माया में हैं, अज्ञान में हैं। **मैं मानता हूँ कि सगुण-निर्गुण में आत्म-ज्ञान नहीं है, मन की सीमा में है और जब तक यहाँ है, बँधन में है। आप कितनी भी चेष्टा करो, छूट नहीं**

सकते हैं। सीधी सीधी बात यह है कि जन्म मरण का कारण अज्ञान है। अज्ञान का पौषक है मन। मन ने बाँध के रखा है। दुख क्या है? नाना योनियों में भटकना है। कीड़ों की योनि में भी अपने को नित्य मान रही है। बहुत कष्ट है। आपको मानव तन मिला तो इसका समाधान हो सकता है। बाँधने वाला मन है। उपाय क्या है, निवृत्ति कैसे हो? दवा क्या है? आत्म-ज्ञान।

**आत्म ज्ञान बिना नर भटके , क्या मथुरा क्या काशी.....।।**

गुरु पल में आत्मा का ज्ञान दे देगा। वाह! ज्ञान बिना मुक्ति नहीं। कैसा ज्ञान! यह कैसे देता है, जिससे संसार सागर से पार हो जाता है। कहते भी हैं कि ज्ञान के बिना पार नहीं होगा। यह ज्ञान क्या! फलाने का जन्म कहाँ हुआ? फलाने की मृत्यु कब हुई? यह ज्ञान क्या! नहीं!

**कबीर एको जानिया, तो जाना सब जान।**

**कबीर एक न जानिया, तो जाना जान अजान ॥**

आत्मा के ज्ञान से पूरे मसलों का हल हो जायेगा।

**क्या हुआ वेदों के पढ़ने से न पाया भेद कुछ।**

**आत्मा जाने बिना ज्ञानी तो कहलाता नहीं।।...**

ज्ञान करते हैं—जानने को। अभी बँधन में इसलिए हैं कि अपने को शरीर माना। इसका मतलब है कि अज्ञान है। ज्ञान क्या है! आपकी आत्मा कहीं गयी नहीं है। आत्मा का ज्ञान कैसे मिलेगा! यह पता चल जाए कि मुझसे कर्म करवा रहा है। आत्मा का तो ज्ञान है ही। बीच में जो हलचल हो रही है, वो समझ नहीं आ रही। जब गुरु ज्ञान देता है तो समझ आने लगता है। फिर मन की ओर नहीं जा पाता। आत्मा तो स्थिर है ही है। मन का अनुकरण फिर आत्मा नहीं करती।

जब नाम की ताकत आती है तो आत्मा मन से अपने को दूर ही रखती है, मन की पकड़ में नहीं आती है। आत्मा जान जाती है कि मुझे कुछ नहीं करना है। समझ जाती है कि मन बड़ा शत्रु है। वो फिर न दौलत इकट्ठी करने जाता है, न श्रृंगार करता है। **‘जब लग आशा देह**

**की, तब लग साध न होय।'** जब तक शरीर के आकर्षण में घूम रहा है, अज्ञानी मानना। गार्गी निर्वस्त्र रहती थी। उसका तर्क था कि सृजन के सभी जीवों में कोई कुछ नहीं पहनता। अब यह नहीं कह रहा हूँ कि कपड़ें मत पहनो। पर आपमें अहंकार होगा तो वस्त्र नहीं उतार पायेंगे। मल मूत्र की गंदी इंद्रियों को ढकने के लिए कपड़ें पहन रहे हो। महापुरुष अपने को सजाता थोड़े है। वो तो तन का हुलिया ही बिगाड़ देता है। एक महात्मा नंगा घूम रहा है। दिखा रहा है कि देख, क्या है। मल मूत्र की इंदियाँ खूबसूरत होतीं तो कभी का मनुष्य नंगा घूमना था। तो भी सभ्य समाज में रह रहे हैं, कपड़े तो पहनने ही हैं।

तो जिसे ज्ञान हो जाता है, शरीर को शत्रु मानता है। मैं माना ही नहीं कि शरीर हूँ। मैं कभी थकता नहीं हूँ। थकना काम शरीर का है। यदि लगातार पूरी ज़िदगी भी बोलता रहूँगा तो भी नहीं थकूँगा, पर आप समय के पाबंध हैं, थक भी जाते हैं। एक महात्मा कुछ खा रहा है तो आपके लिए। वो शरीर को इसलिए स्वस्थ रख रहा है कि शरीर से ही समझाना है। **‘परमारथ के कारणे, संतन धरा शरीर।’**

महात्मा के पास पारस सुरति है। एक डॉ० आदमी को डॉ० बना देता है, एक इंजीनियर आदमी को इंजीनियर बना देता है। एक तत्व ज्ञानी ही तत्व ज्ञानी बना सकता है। यह काम वो पल भर में कर सकता है। यह नाम की ताकत से कर सकता है।

**नाम बिना हृदय शुद्ध न होई।**

फिर कह रहे हैं—

**नाम बिना मूरख सो कहिये।**

**नाम बिना पापी सो लहिये।**

**नाम बिना सब विधि सो हीना।**

**नाम बिना न छूटे कालू।**

**बारं बार नरक में डालू।।**

पहली बात कह रहे हैं कि नाम के बिना दिल सफा नहीं हो सकता।

अच्छे-बुरे विचार दिल में उठ रहे हैं तो शुद्ध कहाँ से है ! नाम आ जाता है तो हृदय शुद्ध हो जाता है । फिर इच्छाएँ भी समाप्त हो जाती हैं ।

**चाह मिटी चिंता मिटी, मनवा बेपरवाह ।**

**वोही शाहनशाह है , जिसको नहीं चाह ॥**

फिर दूसरा कह रहे हैं कि नाम के बिना मूर्ख है । नाम नहीं होगा तो किसी तरह मन के चक्कर में आ जायेगा । बड़ें बड़ें विद्वान भी पाप कर रहे हैं । इसलिए नाम के बिना मूर्ख है । नाम के बाद मन पर नहीं चलता है । मन कंट्रोल में होता है । तो **‘नाम बिना पापी सो लहिये ।’** आप कहेंगे कि पापी कैसे ! बड़े-बड़े अच्छे लोग भी होते हैं । नहीं ! कहीं आप किसी को दुख देते हैं , कभी किसी को भय देते हैं । लेकिन जब नाम की ताकत आती है तो सबमें एक ही आत्मा दिखती है । तो **‘नाम बिना सब विधि सो हीना ।’** कितना भी कोई निडर होगा, पर उसमें भी भय होगा । पर नाम की ताकत के बाद भय भी समाप्त हो जाएगा । वो जान जाता है कि कोई कुछ नहीं कर सकता । **‘नाम बिना न छूटे कालू ।’** नाम के बिना जन्म मरण का चक्कर नहीं छूट सकता । नाम के बाद जन्म मरण भी समाप्त हो जाता है । इच्छाएँ नहीं रह जाती हैं । फिर वैसा ही हो जाता है कि बाहर 50 प्रतिशत तापमान है । आप ए. सी. में बैठे हैं । आप आत्मनिष्ठ हो जाते हैं तो बाहर नहीं निकलना चाहते हैं ।

हॉई ब्रीड का जो बीज है , बीज वही है , पर उसमें वैज्ञानिक तरीके से देखते हैं कि अंकुर है कि नहीं । अंकुरित होने वाला होता है । फिर मरा हुआ दाना, कीड़ा लगा हुआ दाना अलग कर देते हैं । फिर सुरक्षित कर देते हैं कि कीड़ा न लगे । ऐसे वातावरण में रखते हैं कि खराब न हो । फिर मौसमानुसार समय समय पर चैक करते रहते हैं । तो नाम के बाद मौत रूपी कीड़ा पास में नहीं आ सकता है । हम भी छाँटते हैं कि अंकुरण हो सकता है या नहीं । यह कितना शुद्ध है , मन कंट्रोल कर सकता है या नहीं । जिनका शीश गोल है , बुद्धिमान नहीं हो सकते हैं । आपकी भोहों से, आपकी बातचीत से, आपकी आँखों से जान जाते हैं ।



इस तरह से छाँटते हैं। जिनकी आँखों की पुतली छोटी होती है, धोखेबाज, कपटी होते हैं। तो क्या उसे नाम नहीं देना है ! देना है। पर कहते हैं कि अभी कुछ सत्संग सुनो। बड़े स्कूलों में जाते हैं तो बच्चे का टेस्ट तो होता ही है, फिर माता पिता का भी लेते हैं। उनका लेवेल चैक करते हैं कि कैसे हैं। महापुरुष चैक करते हैं कि कहाँ तक चल पायेगा। जिनमें योग्यता नहीं तो कहते हैं कि तू सत्संग सुन, बन जायेगा इसके काबिल। मैला कपड़ा है तो बार बार पछाड़ना पड़ता है। सद्गुरु सत्संग के पछाड़े मारता है। 'काली कंबली न रंगी जाय।' पर गुरु तैयार करता है। नाम का रंग चढ़ा देता है। रंगरेज गंदे वस्त्र पर रंग नहीं चढ़ाता। धोने से कपड़ा गंदा हो जायेगा। इसलिए गुरु सत्संग रूपी साबुन से चुनरिया साफ कर देता है।

**भक्ति स्वतंत्र सकल गुण खानि।**

**बिनु सत्संग न पावै प्राणी ॥**

फिर जीव योग्य हो जाता है। गुरु नाम रूपी औषध से फिर मन पर हमला करता है। तब आत्मा का ज्ञान होने लगता है, आत्मा एकाग्र होने लगती है।



**जब तक गुरु मिले नहीं साँचा।  
तब तक करो गुरु दस पाँचा ॥**

### 3. धर्मदास को चिताया

---

साहिब युग युग में इस संसार में आए और जीवों को चिताकर अमर लोक ले गये। कलयुग में कबीर साहिब के ही अंश धर्मदास जी को जीवों को चिताने संसार में भेजा गया। पर काल पुरुष ने उन्हें अपने जाल में फँसा लिया। तब कबीर साहिब खुद आए और धर्मदास को चिताया। साहिब कह रहे हैं कि जब मैं संसार में आया तो देखा कि सब काल की भक्ति कर रहे थे।

यह जग देखो अनकठ रीती। तजहीं साँच झूठ सो प्रीती ॥  
जो धोखा तेहि साँच कै मानैं। सत्य सार तेहि नहिं पहचानैं ॥  
आदि ब्रह्म कहैं खोजहि नाहीं। कृतिम कला जो सेवहिं ताहीं ॥  
जो रक्षक तेहि गहै न कोई। जो भक्षक तेहि धावहिं लोई ॥  
कर्म भर्म वसि तीर्थ नहाहीं। पुण्य पाप वसि आवहिं जाहीं ॥  
दया हीन नर पढ़हि पुराना। पढ़ि गुणि के अरथावहि ज्ञाना ॥  
अंधा अगुवा तिहुँ पुर माहीं। बहु अंधा तेहि पाछे जाहीं ॥  
अगुवा सहित कूप महाँहीं। कासो कहूँ कोई बूझै नाहीं ॥

साहिब कह रहे हैं कि इस संसार की रीति तो देखो कि सत्य को छोड़ कर झूठ से प्रीति कर रहा है। सत्य को नहीं पहचान रहा है। जो आदि पुरुष है, उसे नहीं जान पा रहा है और जो संसार में अवतार धारण कर झूठी कला दिखा रहा है, उसी की भक्ति कर रहा है। यही कारण है कि यह निरंतर जन्म-मरण के दुख सह रहा है। जो रक्षा करने वाला है, उसे कोई नहीं पकड़ रहा और जो खाने वाला है, कष्ट देने वाला है, सब उसी के पीछे भाग रहे हैं। सभी कर्मों में उलझ गये हैं, तीर्थ, व्रत आदि में फँस गये हैं। पाप-पुण्य के वश में होकर सभी का आवागमन बना

हुआ है। इंसान के दिल में कुछ भी दया नहीं रही है, पर वो पुराणों को पढ़ पढ़ के अर्थ लगाए जा रहा है। धर्म के जो अगुवा लोग हैं, वे अंधे हैं और जो महा अंधे हैं, वे उनके पीछे-2 चल रहे हैं और अंधे अगुवा लोगों के साथ ही संसार रूपी कुँए में गिर रहे हैं। साहिब कह रहे हैं कि मैं किससे ज्ञान की बात कहूँ, कोई समझता ही नहीं है।

**ब्रह्मा विष्णु शिव सनकादि, अज सुर काल के गुण गावहीं।**

**जो काल जीवन को सतावै, तासु भक्ति दृढ़ावहीं॥**

साहिब कह रहे हैं कि जो काल जीवों को सता रहा है, उसी की भक्ति में सभी लगे हुए हैं। मनुष्य, देवता, सनकादि सब काल के ही गुणों को गा रहे हैं।

जब साहिब धर्मदास से मिले तो धर्मदास ने पूछा—

**अरे साधु तुम को धौं अहहू। अनकट बात बहुत तुम कहहू॥**

**विष्णु इष्ट देवन्ह के देवा। तुम्ह तेहि कहहु करहिं यम सेवा॥**

**विष्णु ते अधिक और ना कोई। जमरा विष्णु कै चेरा होई॥**

धर्मदास जी ने कहा—हे साधु! यह आप कौन सी बातें कर रहे हैं! विष्णु जी तो देवों के भी देव हैं और आप कह रहे हैं कि मैं काल की भक्ति कर रहा हूँ। विष्णु से बड़ा भला कौन है! यम भी बेचारा उनका दास है।

धर्मदास की बात को सुन साहिब ने उससे कहा—

**अहो धर्मन जो ऐसन कहहू। तो हम कहै सो चित महँ धरहू॥**

**तुम भाषहु वचन सँजोई। विष्णु ते अधिक और न कोई॥**

**आपुहि विष्णु धनी जो रहई। तो किमि योनि जठर दुख सहई॥**

**जो यम होते विष्णु के दासा। तो नहिं करते विष्णु गरासा॥**

**सेवक हाथ न स्वामिहि घालै। जो विगरै तौ होइ तहि कालै॥**

**ब्रह्मा विष्णु शिव सनकादिका मुनि मुनीश नारद शेषादिक॥**

सब कहँ यम धरि करहि अहारा । लूटहि सबहि काल बरियारा ॥  
 तीनि लोक जेते कोई आहे । काल निरंजन सब कहँ डाहे ॥  
 तुम खोजहु अब सो घर भाई । जेहि घर यम सो बाचहु जाई ॥  
 अहो साहू के सूत सयाना । एती कहे ऊ सब सुनेहु पुराना ॥  
 पढि पुराण नहिं समझेहु भेता । बिनु जाने भर्महु आचेता ॥  
 बह्या गये असंख सिराई । विष्णु कोटि यमरा धरि खाई ॥  
 चाँद औ सूर्य तारागण लोई । कहँ कबीर फिर रहे न कोई ॥

साहिब ने कहा—हे धर्मदास ! जो तुम ऐसा कह रहे हो तो अब मैं जो कहूँ, उसे हृदय में धारण कर लो । यदि विष्णु ही सबसे बड़ें हैं, उनसे बड़ा और कोई नहीं है तो बार-बार गर्भ में क्यों आते हैं ! यदि यम उनका दास है तो रामावतार और कृष्णावतार में वो उनका काल नहीं बनता । सेवक स्वामी को नहीं मार सकता । त्रिदेव, ऋषि-मुनि, नारद, शेष आदि को भी काल नहीं छोड़ता । तीन लोक में जो भी है, काल निरंजन सबको तंग करता है, सबको जला डालता है । इसलिए हे धर्मदास ! तुम ऐसे घर की खोज करो, जहाँ काल न हो, जो काल की चपेट से बचा हुआ हो । क्योंकि असंख्य बह्या चले गये, करोड़ों विष्णु जी भी चले गये । यम ने किसी को भी नहीं छोड़ा । चाँद, सूर्य, तारे आदि में से कोई भी नहीं रहेगा ।

यह सुन धर्मदास जी ने पूछा—

साधु अचरज कह्यो तुम बातां । कहे न बने तुमहिं विख्याता ॥  
 गीता भागवत पुस्तक बहु ताना । निसि दिन सुनो जपों भगवाना ॥  
 विप्र भेष औ छव दर्शन कै । महिमा सबैं कहँ त्रिभुवन कै ॥  
 सबै विष्णु की भक्ति दृढ़ावैं । त्रय देवन सब श्रेष्ठ बतावैं ॥  
 तुम खण्डहु हरि और न कोई । अहो साधु यह अचरज होई ॥

धर्मदास जी ने कहा—हे साधु ! आप तो बड़ी ही अचरज बात कह

रहे हैं। नाना धार्मिक ग्रंथ रात-दिन भगवान के नाम का जाप करने को कह रहे हैं। पंडित जन और छः दर्शन आदि सबही तीन लोक के स्वामी की महिमा कह रहे हैं; सभी विष्णु जी की भक्ति करने को कह रहे हैं और त्रिदेव को ही श्रेष्ठ बता रहे हैं; पर हे साधु! केवल आप अटपटी बात कह रहे हैं, और कोई नहीं कह रहा, जिससे मुझे आश्चर्य हो रहा है।

तब साहिब ने कहा—

**सुनु संत सुबुद्ध सयान सुनि ज्ञान हृदय बिचारहू ॥**

**गहि शब्द परख करि हिये मम बानि निरुआरहू ॥**

**सो कहत वेद बहु विविध पुराण त्रिगुण तेरा पार धनी ॥**

**यह माया जाल है जगत फँदा त्रिविध काल कला बनी ॥**

साहिब ने कहा कि हे चतुर बुद्धि वाले संत! मेरे ज्ञान को सुनकर हृदय में बिचार ले और मेरे शब्द (नाम) को पकड़। वेद, पुराण आदि जिस त्रिगुण, त्रिदेव की बात कर रहे हैं, उनसे परे है तेरा सच्चा परमात्मा। यह तीन लोक का संसार तो मायाजाल है, काल का फँदा है, उसी की सृष्टि है।

धर्मदास जी ने पूछा—

**हे साहब हमसे भल कहहू। तिहुँ पुर प्रलय कहाँ तब रहहू ॥**

**तीन देव सब परलय तर आई। तुम कौने विधि बाँचहु भाई ॥**

धर्मदास जी ने पूछा—हे साहिब! आप भी भली बात कह रहे हैं, भला जब तीन लोक में प्रलय हो जाती है तो आप फिर कहाँ रहते हैं? देव भी यदि प्रलय की चपेट में आ जाते हैं तो आप किस तरह बच सकते हैं!

साहिब ने कहा—

**सुन धर्मन हम तहाँ रहाहीं। यम प्रवेश जहँ सपनेहुँ नाहीं ॥**

**तीन लोक यह परलय होई। चौथा लोक सुख सदा समोई ॥**

तीन देव के पिता निरंजन । ते यम दारुण वंश के अंजन ॥  
 सवा लाख जिव नित सो खाहीं । सुर नर मुनि कोई छाँडै नहीं ॥  
 जाके डर कंपत यमराई । अहो संत हम ताको गुण गाई ॥  
 सत्य पुरुष सत्य लोक निवासी । सकल जीव के पीव अविनासी ॥  
 तिन्ह पुनि षोडश सुत निर्माया । षोडश में एक काल सुभाया ॥  
 काल पुनि तीन सुत उपराजू । आपु गुप्त पुत्रन दिय राजू ॥  
 तीनहुँ तीन लोक ठगि राखा । आपन आपन महिमा भाखा ॥  
 अरुझि रहा जिव तिरगुन फाँसा । भूलि परा निज घर तब नासा ॥  
 जीवन्ह काल बहुत संतावै । बार बार यम जीव नचावै ॥  
 सत्य पुरुष तब मोहि पठाये । जिव मुक्तावन हम चलि आये ॥

साहिब ने कहा कि जहाँ मैं रहता हूँ, वहाँ तो सपने में भी यम का प्रवेश नहीं है। तीन लोक में तो प्रलय हो जाती है, पर चौथे लोक में सदा सुख का राज्य है। तीन जो देवता (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) हैं, उनका पिता निरंजन है। यह निरंजन रोज एक लाख जीवों को खाता है और सवा लाख पैदा करता है, किसी को भी छोड़ता नहीं है।

जिसके डर से काल भी डरता है, मैं उसके गुणों का गाण करता हूँ। वो सत्य पुरुष सत्य लोक में रहता है, वो ही सब जीवों का अविनाशी पीव है। उन्होंने 16 पुत्रों को उत्पन्न किया और उनमें एक काल हुआ। यही ज्योति स्वरूप निरंजन राजा है। इसके आगे तीन बेटे हैं, जिन्हें तीन लोक का राज्य देकर यह स्वयं गुप्त हो गया है। तीन लोकों के जीवों को ठग लिया गया है और अपनी महिमा को प्रगट कर जीव को फँसा लिया गया है, जिससे जीव अपने सही घर को भूल गया है। काल जीवों को बहुत सताता है, यम उन्हें बार बार जन्म मरण में फेंककर नचाता है। हे धर्मदास! ऐसे में सत्य पुरुष ने मुझे संसार में भेजा है; मैं जीवों को मुक्त करवाने आया हूँ।

तब धर्मदास ने पुनः पूछा—

**हे साहब कछु पूछौं तोही । जो पूछहुँ सो भाषहु मोही ॥**

**निरंकार निरंजन राई । धूर्तमता तिन्ह का किय भाई ॥**

**जाते इन उहाँ रहै न पाई । सो चरित्र मोहिं वरणि सुनाई ॥**

धर्मदास जी ने पूछा कि निरंजन ने ऐसा कौन सा पाप किया, जिसके कारण वो अमर लोक में नहीं रह सका!

**अहो संत जो पूछहु मोहीं । समुझहु चरित्र बुझावों तोहीं ॥**

**सत्य पुरुष सुत षोडश कीन्हा । अष्टंगी एक कन्या रचि लीन्हा ॥**

**सो कन्या इन्ह कीन्हा गरासा । ताते भौ यहि लोक निकास ॥**

**पुरुष दरश इन्ह बहुर न पावा । तीन लोक महँ आनि रहावा ॥**

साहिब ने कहा कि यदि तुम पूछ रहे हो तो मैं तुम्हें काल का चरित्र समझाता हूँ, समझो। सत्य पुरुष ने 16 पुत्रों के साथ एक कन्या भी बनाई। उस कन्या को निरंजन ने खा लिया, इसी कारण उसे अमर लोक से निकाला गया। उसके बाद काल निरंजन ने परम पुरुष का दर्शन नहीं पाया और तीन लोक में आकर रहने लगा।

इतना कहकर साहिब लुप्त हो गये और धर्मदास मन-ही-मन मुरझा-सा गये, मानो शरीर से साँस ही न रह गयी हो। वे उदास हो गये कि साहिब उसे छोड़ जाने कहाँ चले गये।

**शोच हृदया रैन दिन, भोजन भवन न भाव ॥**

**बड़ें भाग्य सो मिले प्रभु, बिछुरे कबहुँ भेटाव ॥**

उनके हृदय में रात दिन इस बात का दुख था, न उन्हें भोजन अच्छा लगता था, न भवन; वे सोच रहे थे कि साहिब बड़े भाग्य से मिले थे, अब न जाने उनका दर्शन कब होगा!

**पाँच दिवस गये ऐसेहि बीता । निपट विकल हिय व्यापी चिंता ॥**

**छठयें दिन अस्नान कहँ गयऊ । करि अस्नान चिंतवन कियऊ ॥**

**पुहुप वाटिका प्रेम सोहावन । बहु शोभा सुंदर शुठि पावन ॥**

तहाँ जाय पूजा अनुसार। प्रतिमा देव सेव विस्तार।।  
 खोल पिटारी मूर्ति निकारी। ठाँव ठाँव धरि प्रगट पसारी।।  
 तोरि आनेउ पुहुप बहु भाँति। चौका विस्तार कीन्ही यहि भाँति।।

जब पाँच दिन ऐसे ही बीत गये तो धर्मदास जी के हृदय में चिन्ता अधिक व्याप्त हो गयी। छठे दिन स्नान करके धर्मदास जी ने पुष्प वाटिका से फूल तोड़े और मूर्ति पूजा में लग गये। पिटारी खोली, उसमें से मूर्तियाँ निकालीं और जगह जगह रख दीं। फिर फूल तोड़कर लाए और चौका किया।

भेष छिपाय तहाँ प्रभु आये। चौंका निकटहिं आसन लाये।।  
 धर्मदास पूजा मन लाये। निपट प्रीति अधिक चित चाये।।  
 मन अनुहारि ध्यान लौ लावई। कहि कहि मंत्र पुहुप चढ़ावई।।  
 चँवर डोलावहिं घण्ट बजायी। स्तुति देव की पढ़ै चित लायी  
 करि पूजा प्रथमहिशिर नावा। डारि पेटारी मूर्ति छिपावा।।

इतने में भेष धारण कर साहिब वहाँ आकर बैठ गये। धर्मदास मंत्र पढ़ते जाते थे और मूर्ति पर फूल चढ़ाते जाते थे। जब पूजा हो गयी तो मूर्तियों को पुनः पिटारी में डालकर छिपा दिया।

यह सब देख साहिब ने कहा—

अरे साधु यह का तुम करहूँ। पौवा सेर छटंकी धरहूँ।।  
 केहि कारण तुम प्रगट खिडायहु। डारि पेटारी काहे छिपायेहु।।

साहिब ने कहा—हे साधु! यह तुम क्या कर रहे हो? कभी पाव, सेर और छटाँक के बराबर मूर्तियों को पिटारी से निकाल उसपर फूल फेंकते हो और कभी उन्हें पिटारी में डाल फिरसे छिपा देते हो।

यह सुन धर्मदास जी ने कहा—

बुद्धि तुम्हार जानी न जाई। कस अज्ञानता बोलहु भाई।।  
 हम ठाकुर कर सेवा कीन्हा। हम कहँ गुरु सिखावन दीन्हा।।



**ता कहँ सेर छटंकी कहहूँ । पाहन रूप ना देव अनुसरहूँ ॥**

धर्मदास जी ने कहा कि तुम्हारी बुद्धि जानी नहीं जाती है । तुम ये सब अज्ञानता की बातें क्यों कर रहे हो? क्या तुम्हें नहीं मालूम कि मैं ठाकुर की पूजा कर रहा हूँ! मेरे गुरु ने मुझे यह सीख दी है । तुम इन्हें सेर और छटांक कह रहे हो, क्या पत्थर में किसी देवता को नहीं पहचानते!

तब साहिब ने अनजान बनकर धर्मदास से कहा—

**अरे साधु तुम ठीक सिखावा । हमरे चित यक संशय आवा ॥**

**एक देव सम सुनेउ पुराना । विप्रन कहे ज्ञान सुनिधाना ॥**

**वेद वाणी तिन्ह मोहि सुनावा । प्रभु कै लीला सुनि मन भावा ॥**

**कहे प्रभु वह अगम अपारा । अगम गहे नहिं आव अकारा ॥**

**सुनेउँ शीश प्रभु केर अकाशा । पग पताल तेहि अपर निवाशा ॥**

**एकै पुरुष जगत कै ईसा । अमित रूप वह लोचन अमीसा ॥**

**सोकित पौ तिन्ह माहिं समाहीं । अहो संत यह अचरज आहीं ॥**

**औ गुरु गम्य मैं सुना रे भाई । अहैं संग प्रभु लखौ न जाई ॥**

**अहो संत मैं पूछहुँ तोहीं । बात एक जो भाषो मोहीं ॥**

**यहि घटमहँ को बोलत आही । ज्ञानदृष्टि नहिं संत चिन्हाही ॥**

**जो लगि ताहि न चीन्हहुँ भाई । पाहन पूजि मुक्ति नहिं पाई ॥**

**कोटि कोटि जो तीर्थ नहाओ । सत्य नाम बिन मुक्ति न पाओ ॥**

**कहो तुम तब को घट माहीं । संतों चीन्ह वेगि तुम ताहीं ॥**

**सर्वमयी औ सबते न्यारा । सो खेलै यह खेल रिसाला ॥**

**कौन सुंदर यह साज बनाया । नाना रंग रूप उपजाया ॥**

**ताहि न खोजहु साहु के पूता । का पाहन पूजहु अजगूता ॥**

साहिब ने कहा—हे संत! तुमने ठीक कहा, पर मेरे दिल में एक संशय आया है । एक ब्राह्मण ने मुझसे ईश्वर का ज्ञान कहा है । उसने मुझे वेद की वाणी सुनायी है और उसमें प्रभु की लीला मेरे मन को अच्छी

लगी है। वो कहता है कि प्रभु तो अगम है, वो किसी आकार में नहीं आ सकता। सुना है कि आकाश तक उसके शीश हैं और पाताल तक उसके पाँव हैं। वही एक प्रभु जगत का स्वामी है। वो फिर छोटी सी पिटारी में कैसे समा गया, यह सुनकर मुझे अचरज हो रहा है। और भी मैंने गुरु कृपा से सुना है कि उसको इन आँखों से कोई देख नहीं सकता।

इसलिए हे संत ! मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ कि साधु लोग शरीर के भीतर किसे बताते हैं। कहते हैं कि जब तक उसे नहीं जान लोगे, तब तक कुछ नहीं हो सकता, पाहन के पूजने से मुक्ति नहीं हो सकती। चाहे करोड़ों तीर्थों में जाकर नहा लो, लेकिन सत्यनाम के बिना तो मुक्ति नहीं हो सकती। यदि तुम इसे ही प्रभु मान रहे हो, तो फिर जो घट में रहने वाला है, वो कौन है ! वो तो सब जगह व्याप्त और सबसे न्यारा है। उसी का सारा खेल है। हे शाह के बेटे ! उसे क्यों नहीं खोजते, पाहन को क्यों पूज रहे हो !

तब धर्मदास को ज्ञान की बातें सुन आश्चर्य हुआ।

**धर्मदास सुनि चक्रित भयऊ। पूजापति बिसरि सब गयऊ ॥  
एक टक मुख जो चितै रहाई। पलकौ सुरति ना आनौ जाई ॥  
प्रिय लागै सुनि ब्रह्म का ज्ञान। विनय कीन्ह बहु प्रीति प्रमान ॥**

धर्मदास यह सुन चकित हो गये, मूर्ति की पूजा करना भूल गये, एक टक साहिब के मुख को निहारते रहे। उन्हें साहिब का ब्रह्म-ज्ञान अच्छा लगा, इसलिए उन्होंने बड़े प्रेम से साहिब को बिनती की और कहा—

**अहो साहिब जस तुम्ह उपदेशा। ब्रह्म-ज्ञान गुरु अगम सँदेशा ॥  
छठयें दिवस साधु एक आये। प्रीय बात पुनि उनहु सुनाये ॥  
अगम अगाधि बात उन भाखा। कृत्रिम कला एक नहिं राखा ॥  
तीरथ व्रत त्रिगुण कर सेवा। पाप पुण्य वह करम करे वा ॥  
सो सब उन्हहि एक नहिं भावै। सबते श्रेष्ठ जो तेहि गुण गावै ॥**

जस तुम कहेहु विलोई विलोई । अस उनहूँ मोहिं कहा सँजोई ॥  
 गुप्त भये पुनि हम कहँ त्यागी । तिन्ह दरशन के हम वैरागी ॥  
 मोरे चित अस परचै आवा । तुम्ह वै एक कीन्ह दुइ भावा ॥  
 तुम कहाँ रहो कहो सो बाता । उन्ह साहिब कहँ जानहु ताता ॥  
 केहि प्रभु कै तुम सुमिरण करहु । कहहु विलोइ गोइ जनि धरहु ॥

धर्मदास जी ने साहिब से कहा कि हे साधु! आपकी बात बड़ी ही प्यारी है, जैसा आप उपदेश दे रहे हैं, वैसा ही एक साधु ने मुझे छः दिन पहले दिया था। उन्हें भी तीर्थ, व्रत आदि पाखंड लगते हैं; जिस साहिब की बात आप कर रहे हैं, वे भी वही बात करते थे। पर वे मुझे उन साहिब का ज्ञान देकर गुप्त हो गये। मैं तबसे उनके दर्शन को तरस रहा हूँ। मुझे उनमें और आपमें कोई भेद नहीं लग रहा। आप कहाँ रहते हैं, कृपा करके मुझे बताओ और आपने उस साहिब को कैसे जाना है! आप किसका सुमिरन करते हैं, कहो। आप सब बात अलग अलग करके बताओ, कुछ भी छिपाना नहीं।

तब साहिब ने कहा—

हे धर्मन मैं उनका सेवक । जहँ हि सो भव पार पद देवक ।  
 वे प्रभु सत्यलोक के वासी । आये यहि जग रहहिं उदासी ॥  
 नहिं वो भग दुवार होइ आये । नहिं वो भग माहिं समाये ॥  
 उनके पाँच तत्त्व तन नाहिं । इच्छा रूप सो देह नहिं आहिं ॥  
 निःइच्छा सदा रहँहीं सोई । गुप्त रहहिं जग लखै न कोई ॥  
 नाम कबीर संत कहलाये । रामानन्द सो जान सुनाये ॥  
 हिन्दू तुरक दोउ उपदेशैं । मेटैं जीवन केर काल कलेशैं ॥  
 माया ठगन आइ बहु बारी । रहैं अतीत माया गइ हारी ॥  
 तिनहिं उठावा तोहि पाही । निश्चय उन्ह सेवक हम आही ॥  
 अहो संत जो कारज चहहु । तो हमार सिखावन गहहु ॥

**उनकर सुमिरण जो तुम करिहौं । एकोतरसौ पुरुषा लै तरिहौ ॥  
 वो प्रभु अविगत अविनाशी । दास कहाय प्रगट भे काशी ॥  
 वे यम के सिर मर्दन हारे । उनहिं गहै सो उतरै पारे ॥  
 जहाँ वो रहहिं काल तहँ नाहीं । हंसन सुखद एक यह आहीं ॥**

साहिब ने कहा—हे धर्मदास ! मैं उनका ही सेवक हूँ । वे भवसागर से पार करने वाले हैं । जिन्होंने तुमसे ऐसा ज्ञान कहा था, वे प्रभु तो सत्य लोक के निवासी हैं । वे इस जग में आकर उदास रहते हैं । वे भग द्वार से नहीं आये; वे भग द्वार में कभी समाते ही नहीं हैं । उनकी देही पाँच तत्वों की नहीं है । वे तो इच्छा रूप हैं, उनकी कोई देही नहीं है । वे इस संसार में गुप्त रहते हैं, कोई उन्हें देख नहीं पाता है । उनका नाम कबीर है, वे हिंदू—मुसलमान दोनों को उपदेश देते हैं और काल के कष्ट को मिटाने वाले हैं । माया उन्हें बहुत बार ठगने के लिए आई, पर वे उससे परे रहे; माया हार गयी । हे संत ! यदि कल्याण चाहते हो तो मेरी सीख को पकड़ो और उनका सुमिरन करो । जो उनका सुमिरन करता है, उसकी 70 पीढ़ी तर जाती है । वे प्रभु तो अविगत हैं, अविनाशी हैं, वे काशी में प्रगट हुए हैं और स्वयं को उसका दास कहाया है । वे यम को मारने वाले हैं । जो उनकी शरण में आ जाता है, वो भवसागर के पार हो जाता है । जहाँ वे रहते हैं, वहाँ काल नहीं आ सकता । केवल एक वे ही हंसों को सुख देने वाले हैं ।

यह सुन धर्मदास जी ने पुनः पूछा—

**अहो साहिब बलि बलि जाऊँ । मोहिं उनके संदेश सुनाऊँ ॥  
 मोरे तुम उनहीं सम भाई । तुम वै एक नाहिं विगराई ॥  
 नाम तुम्हार काह है स्वामी । सो भाषहु प्रभु अंतर्यामी ॥**

कहा कि तुम्हारी बलि जाता हूँ, मुझे उनका संदेश सुनाओ । मुझे तुम उन्हीं के समान लग रहे हो, उनमें और तुममें कोई अंतर नहीं लग रहा । इसलिए मुझे बताओ कि तुम्हारा नाम क्या है ?

साहिब ने कहा—

धर्मनि नाम साधु मम आही । संतन माँह हम सदा रहाही ॥  
जो जिव करै साधु सेवकाई । सो जिव अति प्रिय लागै भाई ॥  
हमरे साहिब की ऐसन रीती । सदा करहिं साधुन सो प्रीति ॥  
जो जिव उन्हकर दीक्षा लेहीं । साधू सेव सिखावन देहीं ॥  
जीव दया पर आतम पूजा । सतगुरु भक्ति देव नहीं दूजा ॥

कहा कि मेरा नाम साधु है और मैं सदा संतों में ही रहता हूँ । जो कोई साधु की सेवा करता है, वो मुझे बड़ा प्रिय है । हमारे साहिब की ऐसी रीति है कि सदा साधु से प्रेम करते हैं । जो कोई उनसे दीक्षा लेते हैं, उन्हें साधु की सेवा की शिक्षा देते हैं । जीवों पर दया करना सिखाते हैं और आत्म-पूजा बताते हैं । सद्गुरु की भक्ति के अन्य किसी देवता की पूजा न करने का संदेश देते हैं ।

यह सुन धर्मदास जी ने कहा कि मैं तो उस साहिब का परिचय-भेद नहीं जानता हूँ, इसलिए हे अंतर्यामी प्रभु! मुझे उनका भेद कहिए ।

साहिब ने पूछा कि तुम निगुरे हो या तुमने कोई गुरु किया है ।

धर्मदास जी ने कहा—

सुनो साहिब गुरु को हम कीन्हा । यह परिचे गुरु मोहि न दीन्हा ॥  
रूपदास विठलेश्वर रहहीं । तिनकर शिष्य सुनहुँ हम अहहीं ॥  
उन मोहिं यह भेद समुझावा । पूजहु शालिग्राम मन भावा ॥  
गया गोमती काशी परागा । होइ पुण्य शुद्ध जनम अनुरागा ॥  
बहुतैं कही प्रमोद दृढ़ाई । विष्णुहिं सुमिरि मुक्ति होइ भाई ॥  
गुरु कै वचन शीश पर राखा । बहुतक दिन पूजा अभिलाखा ॥  
तुम्हरी भेष मिले प्रभु जबते । तुम बाणी प्रिय लागी तबसे ॥  
तौहरै दास कहाउब स्वामी । यम ते छोड़।वहु अंतर्यामी ॥  
वह गुरु सर्गुण त्रिगुण पसारा । तुम हौ यम ते छोड़।वनहारा ॥

धर्मदास जी ने कहा कि मैंने गुरु तो किया है, पर मेरे गुरु ने उस साहिब का परिचय नहीं दिया। रूपदास जी मेरे गुरु हैं। उन्होंने मुझे शालिग्राम की पूजा का संदेश देकर कहा है कि तीर्थ आदि को, विष्णु जी की पूजा करो, मुक्ति पद पाओगे। मैंने गुरु के वचनों को शीश पर रखा और बहुत दिन पूजा की। फिर मुझे आपके वाले गुरु मिले, तबसे मुझे आपकी वाली बात ही प्रिय लगी है। मैं तुम्हारा दास हूँ, मुझे यम से छुड़ाओ। मेरे गुरु तो सगुण-निर्गुण की बात करते हैं, पर आप यम से छुड़ाने वाले हैं।

यह सुन साहिब ने कहा-

**अब तुम निज भवन चलि जाऊ। गुरु परीक्षा जाइ कराऊ ॥**

**जो गुरु तुम्हें न कहें सँदेश। तब हम तुम्ह कहें देव उपदेशा ॥**

**हम जाहिं सतगुरु पहँ भाई। तुम्हरी प्रीति अब उनहिं सुनाई ॥**

साहिब ने कहा कि यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम्हें दीक्षा दूँ, पर अब तुम अपने घर जाओ और अपने गुरु की परीक्षा लो। यदि वे तुम्हें सत्य का सँदेश न दें, तब मैं तुम्हें उपदेश दूँगा। अब मैं सद्गुरु के पास जाता हूँ और तुम्हारी प्रीति उन्हें सुनाता हूँ।

धर्मदास जी ने कहा-

**हे साहिब एक आज्ञा पावों। दया करो कछु प्रसाद लै आवों ॥**

धर्मदास जी ने कहा-हे साहिब! यदि आपकी आज्ञा पाऊँ तो आपके लिए कुछ प्रसाद ले आऊँ।

साहिब ने कहा-

**हे धर्मदास मोहि इच्छा नाहीं। क्षुधा न व्यापै सहज रहाहीं ॥**

**सत्यनाम है मोर अहारा। भक्ति भजन सतसंग सहारा ॥**

कहा कि मुझे इच्छा नहीं है, क्योंकि भूख प्यास नहीं लगती है, मेरा आहार सत्यनाम ही है और भक्ति, भजन, सत्संग ही मेरा सहारा है।

धर्मदास जी ने कहा कि यदि आप अन्न ग्रहण नहीं करेंगे तो मेरे हृदय में लगी विरह की अग्नि शांत नहीं होगी। साहिब ने कहा कि अगर

तुम्हारी इच्छा तो ले आओ। तब धर्मदास जी दौड़कर गये और साहिब के लिए पेड़ें आदि ले आए और बहुत भांति से विनती करके खिलाए।

तब साहिब ने कहा कि अब मैं सद्गुरु के पास जा रहा हूँ, आशीर्वाद ले लो।

दंडवत कर धर्मदास जी ने कहा—

**करि दंडवत धर्मनि कर जोरी । अब सुदिन होइ कब मोरी ॥  
तेहि दिन सुदिन लेखब प्रभुराई । जेहि दिन तुव पगु दरशन पाई ॥**

धर्मदास जी ने दंडवत प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा कि अब मेरा अच्छा दिन कब आयेगा। जिस दिन आपके चरणों के दर्शन होंगे, वही दिन मेरे लिए शुभ होगा। आशीर्वाद देकर साहिब तुरंत वहाँ से चल पड़े। धर्मदास मार्ग में खड़े होकर उन्हें प्रेम से देखते रहे।

अब धर्मदास जी भी अपने गुरु के पास चले।

**धर्मदास चलि भये पुनि तहवाँ । रूपदास कर आश्रम जहवाँ ॥  
पहुँचे जाइ गुरु के पासा । होइ आधीन तब कीन्ह प्रणामा ॥  
तुम गुरु देव शिष्य हम आहीं । परचे ज्ञान कहहु मोहि पाहीं ॥  
जीव मुक्त कौन विधि भाई । तन छूटे कहँ जाय समोई ॥  
आदि ब्रह्म सो कहँवा रहाई । घट महँ बोले कौन सो आही ॥  
हम को हैं घट को होई । जग करता प्रभु कहाँ समोई ॥**

धर्मदास जी अपने गुरु रूपदास जी के आश्रम में पहुँचे। वहाँ पहुँच वे गुरु के पास पहुँचे और अधीन होकर प्रणाम किया, कहा कि आप गुरु हैं और मैं शिष्य हूँ, मुझे कुछ ज्ञान दीजिए। जीव की मुक्ति कैसे होती है? शरीर छूटने के बाद कहाँ समाना होता है? आदि ब्रह्म कहाँ रहता है? जो घट में रहता है, वो कौन है? मैं क्या हूँ? जो मेरे शरीर में रहता है, वो कौन है? जगत का कर्त्ता प्रभु कहाँ रहता है?

रूपदास जी ने कहा—

**धर्मदास तुम भयो अजाना । को सिखायो तोहि अस ज्ञाना ॥**

सुमिरहु राम कृष्ण भगवाना । ठाकुर सेवा कर बुधिवाना ॥  
 विष्णु पंजर ओ लक्ष्मी नारायण । प्रतिमा पूजन मुक्ति परायन ॥  
 गया गोमती काशीथाना । तीरथ नहाय पुण्य परधाना ॥  
 निराकार निर्गुण अविनाशी । ज्योति स्वरूप शून्य का वासी ॥  
 ताहि पुरुष कर सुमिरहु नामा । तन छूटै पहुँचहु हरिधामा ॥

रूपदास जी ने कहा—हे धर्मदास ! तुम इतने अज्ञानी क्यों हो गये हो !  
 राम और कृष्ण भगवान का सुमिरन करो, ठाकुर जी की सेवा करो ।  
 लक्ष्मी-नारायण की मूर्ति पूजा करो, तीर्थ आदि जाओ, स्नानादि करो ।  
 जो निराकार, निर्गुण परमात्मा है, जो ज्योति स्वरूप है, शून्य का वासी  
 है, उसके नाम का सुमिरन करो । ऐसे में शरीर छूटने पर तुम ईश्वर के  
 धाम में पहुँचोगे ।

धर्मदास जी ने पूछा—

हो गुरुदेव पूछौ यक बाता । क्रोध करि कहहु जनि ताता ॥  
 जीव रक्षक सो कहाँ रहाही । निराकार जिव भक्षक आही ॥  
 लक्ष जीव नित खाय निरंजन । तिया सुत ताहि करै बहु गंजन ॥  
 तीनों देव पड़ें मुख काला । सुर नर मुनि सब करै विहाला ॥  
 नर बपुरा की कौन चलावै । कौनी ठोर जीव सचुपावै ॥  
 तीन लोक वैकुण्ठ नशायी । अस्थिर घर मोहिं देहु बतायी ॥  
 पाप पुण्य भ्रम जाल पसारा । कर्मबंध भरमे संसारा ॥  
 किरतम भजि जोइन नहिं छूटै । सत्यनाम बिनु यम धरि लूटै ॥

धर्मदास जी ने पूछा कि हे सद्गुरु ! मैं एक बात पूछता हूँ, क्रोध नहीं  
 करना । जो जीव का रक्षक है, वो कहाँ रहता है ? निराकार तो जीव का  
 भक्षक है, एक लाख जीव रोज़ खाता है । सुर, नर, मुनि सबको विहाल  
 करके रखा हुआ है । आम आदमी की बात क्या करनी, तीन लोक,  
 वैकुण्ठ आदि का भी नाश हो जाता है । इसलिए मुझे असली घर का भेद  
 दे दो, जहाँ कभी नाश नहीं है । पाप-पुण्य का भ्रम जाल फैला हुआ है,



कर्म के बँधन में जीव को काल ने फँसा दिया गया है, सारा संसार भ्रमित हो गया है। इस तरह से तो कल्याण नहीं होने वाला। सत्यनाम के बिना यम लूट लेता है।

यह सब सुन रूपदास जी ने कहा—

**अरे धर्मन हम चक्रित होही। यह कछु समुझि परै नहिं मोहीं॥  
तीन लोक के कर्त्ता जो हैं। तेहि भाषत हौ जमरा सोहै॥  
ब्रह्मा विष्णु महेश गोसाईं। तुम्ह तेहि कहहु काल धरि खाई॥  
तीनि लोक में वैकुण्ठहिं श्रेष्ठा। सो सब तुम्ह मानहु निकृष्ठा॥  
तीरथ व्रत अरु पुण्य कमाई। यमजाल तुम ताहि ठहराई॥  
और अधिक मैं कहा बताऊँ। जो जानों सो नहीं दुराऊँ॥  
जिन्ह तोहि अस बुद्धि दिया भाई। तिनहीं कहँ तुम सेवहु जाई॥**

रूपदास जी ने कहा कि हे धर्मदास! मैं चकित हूँ कि तुम यह सब क्या कह रहे हो! मुझे कुछ भी समझ नहीं आ रहा है। तीन लोक के जो कर्त्ता हैं, तुम उन्हें काल कह रहे हो। तीन लोक में वैकुण्ठ ही श्रेष्ठ है, पर तुम उसे भी कुछ नहीं गिन रहे हो। तीरथ, व्रत, पुण्य आदि को भी तुम काल का जाल कह रहे हो। मैं अधिक क्या बताऊँ, जो यह सब जानता, तो तुमसे छिपाता नहीं, इसलिए जिसने तुम्हें यह बुद्धि दी है, उसी की जाकर सेवा करो।

धर्मदास जी ने कहा—

**धर्मदास विनवैं कर जोरी। चूक ढिठाई बक्सहु मोरी॥  
हम तेहि पद अब सेवैं जायी। जिन्ह यह अगम मोहि बतायी॥  
तुम्हहूँ गुरु वो सतगुरु मोरा। उन हमार यमफँदा तोरा॥**

धर्मदास जी ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, कहा कि मेरी जो भी कोई भूल है, उसे क्षमा करना, पर मैं अब उन्हीं के चरणों की पूजा करूँगा, जिन्होंने मुझे यह रहस्य बताया है। आप तो मेरे गुरु हैं, पर वे मेरे सद्गुरु हैं; उन्होंने मेरा काल का जाल तोड़ा है।

धर्मदास जी ने तब उन्हें प्रणाम किया और अपने नगर मथुरा में आ गये। बहुत दिन ऐसे बीत गये। अब धर्मदास जी के मन में चिंता हुई कि साहिब नहीं आये। सोचा, कहीं मुझ सेवक को भुला तो नहीं दिया। यह सोच उन्होंने साहिब का ध्यान करके प्रसाद बनाया।

**एक दिवस प्रभु ध्यान लगाय। क्षोभित चित्त प्रसाद बनाय ॥  
जिन्दा रूप धरि प्रभु आये। वृक्ष एक तर आसन लाये ॥  
इत चौका महँ अस भो भाई। बहु चिउँटी चूल्हे झरकाई ॥  
हरि हरि करि धर्मनि अकुलाने। महापाप लखि मनहिं भुलाने ॥  
ततक्षण धर्मनि जिन्दहि हे रा। आये प्रसाद लेहु यहि बेरा ॥  
धर्मदास दीन्हे उ परसादा। तब जिन्दा पुनि कीन्ह समादा ॥**

साहिब जिन्दा रूप धारण कर प्रगट हुए, एक वृक्ष के नीचे आसन लगाकर बैठ गये। इधर धर्मदास जी के चूल्हे में बहुत सारी चींटियाँ जलकर मर गईं। धर्मदास जी पाप हुआ समझ दुखी हुए। उसी समय उनकी नज़र साहिब पर पड़ी। वे प्रसाद लेकर आए और साहिब को दिया।

साहिब ने कहा—

**घात कियऊ तुम जीव अनेका। सो प्रसाद ले मम शिर टेका ॥**

साहिब ने कहा कि तुमने अनेक जीवों की हत्या की और वो प्रसाद लेकर मेरे शिर पर पटक दिया।

धर्मदास जी ने कहा कि यह आपने कैसे जाना! बताओ कि कौन-सी जीव-हत्या हुई है? साहिब ने कहा कि चूल्हे में तुमने बहुत-सी चींटियों को जलाया है।

**सुनि धर्मनि चित संशय आने। यह को आहि हृदय अनुमाने ॥  
सबै भात चिउँटी होइ बीता। बहुत सँदेह धर्मनि हिय कीता ॥**

साहिब की वाणी सुन धर्मदास जी को संदेह हुआ कि यह तो सब जानते हैं। तभी सभी चावल चींटियाँ ही हो गये, जिससे धर्मदास जी का संदेह अधिक हो गया। तो धर्मदास जी ने कहा—

हे साहब मैं पूछत सकाऊँ । दया करि तृष्णा मोर बुझाऊँ ॥  
 चिउँटी सरी जरी प्रभु हमते । सो अदृष्टि बहु अंतर तुमते ॥  
 सो कैसे जानेहु तुम ताता । औ प्रसाद चिउँटी होइ जाता ॥  
 कौतुक देखि अचरज मुहि आवा । यह लीला तै जानि न पावा ॥

धर्मदास जी ने कहा कि हे साहिब ! चींटियाँ तो मुझसे जली थी, पर आपने कैसे जाना और फिर सभी चावल चींटियाँ कैसे हो गये ! यह कौतुक देख मुझे अचरज हो रहा है, आपकी लीला जान नहीं पा रहा हूँ ।  
 साहिब ने कहा—

धर्मन यह सतगुरु की लीला । धन्य सतगुरु जिन्ह ख्याल करीला ॥  
 जानहु सतगुरु नाम प्रतापा । भयो पपील सर जिवगत पापा ॥

कहा कि यह सद्गुरु की लीला है; वे सद्गुरु धन्य हैं, जिन्होंने यह ख्याल कराया । सद्गुरु के प्रताप से ही सारे चावल चींटियाँ हो गये और जीव हत्या का पाप नहीं लगा ।

सद्गुरु का नाम सुन धर्मदास जी के मन में बड़ी प्रसन्नता हुई, तब उन्होंने पूछा—

अहो साहेब नाम क आही । परचै नाम कहो मोहिं पाहीं ॥  
 अरु सतगुरु तुमका कहँ कहहूँ । हे प्रभु कौन देश तुम रहहूँ ॥

धर्मदास जी ने हाथ जोड़कर कहा कि हे साहिब ! कृपा करके मुझे बताओ कि आपका नाम क्या है ? आप किस देश में रहते हैं ? मैं आपको क्या कहूँ ?

साहिब ने कहा—

जिन्दा नाम अहै सुनु मोरा । जिन्दा भेष खोज किहँ तोरा ॥  
 हम सतगुरु कर सेवक आहीं । सतगुरु संग हम सदा रहाहीं ॥  
 सत्य पुरुष वह सतगुरु आहीं । सत्य लोक वह सदा रहाहीं ॥  
 सकल जीव के रक्षक सोई । सतगुरु भक्ति काज जिव होई ॥

सतगुरु सत्य कबीर सो आहीं । गुप्त प्रगट कोई चीन्है नाहीं ॥  
 सतगुरु आ जगत तन धारी । दासातन धरि शब्द पुकारी ॥  
 काशी रहहिं परखि हम पावा । सत्यनाम उन मोहिं दृढ़ावा ॥

कहा कि मेरा नाम जिन्दा है, मैं सद्गुरु का सेवक हूँ और उन्हीं के साथ रहता हूँ। वो सद्गुरु ही सत्यपुरुष हैं, वे सत्यलोक में ही सदा रहते हैं। वे ही सब जीवों के रक्षक हैं। जो भी जीव सद्गुरु की भक्ति करता है, उसका कल्याण हो जाता है। उनका नाम सद्गुरु सत्य कबीर है, वे गुप्त भी हैं और प्रगट भी, पर कोई भी उन्हें पहचान नहीं पाता है। सद्गुरु रूप में आकर उन्होंने जगत में शरीर धारण किया है और अपने को दास कहाकर सत्य शब्द की पुकार करते हैं। वे काशी में रहते हैं, मैंने उन्हें परख लिया है और उनसे सत्यनाम की दीक्षा ली है।

तब जिन्दा रूप में साहिब ने धर्मदास जी को ज्ञान की बातें समझाई, कहा—

तीन लोक जो काल सतावे । ताको सब जग ध्यान लगावे ॥  
 निराकार जेहि वेद बखानै । सोई काल कोई मरम न जानै ॥  
 तिन्ह कर सुत आहि त्रिदेवा । सब जग करै जो उनकी सेवा ॥  
 त्रिगुण काल यह जग फँदाना । गहै न अविचल पुरुष पुराना ॥  
 जाकर ई जग भक्ति कराई । अंतकाल जिव सो धरि खाई ॥  
 सबै जीव सतपुरुष के आहीं । यम दै धोख फँदाइस ताहीं ॥  
 प्रथमहि भये असुर यमराई । बहुत कष्ट जीवन कहँ लाई ॥  
 दूसरि कला काल पुनि धारा । धरि अवतार असुर सँघारा ॥  
 प्रभुता देखि जिव कीन्ह विश्वासा । अंतकाल पुनि करै निरासा ॥  
 कालै भेष दयाल बनावा । दया दृढ़ाय पुनि घात करावा ॥

साहिब ने कहा कि काल, जो पूरे तीन लोक को सता रहा है, का ही सारा संसार ध्यान कर रहा है। जिस निराकार की बात वेद कर रहा है, वही काल है, पर कोई उसका भेद नहीं पा रहा है। उसी के तीन बेटे

त्रिदेव हैं और सारा संसार उन्हीं की सेवा, उन्हीं की भक्ति कर रहा है। त्रिगुण के जाल में सारा संसार फँस गया है। जिनकी यह जग भक्ति करता है, अंत में वही उसे खा जाता है। सभी जीव सत्पुरुष के हैं, परम पुरुष के हैं, साहिब के हैं, पर यम ने, काल ने धोखे से उन्हें अपने जाल में फँसा लिया है। पहले तो यम असुर रूप में जीवों को सता रहा है। दूसरे फिर वो अवतार धारण कर असुरों का सँघार कर रहा है। जीव कष्टों से बचने के लिए पुकार कर रहे हैं, रक्षा के लिए निराकार परमात्मा को पुकार रहे हैं। जीव सोच रहे हैं कि यह हमारा स्वामी है, रक्षक है। यही निराकार काल विश्वास देकर धोखा कर रहा है। उसकी प्रभुता देखकर जीव विश्वास कर रहे हैं कि यह ही हमारा रक्षक है, पर अंतकाल में वो ही जीवों को फिर निराश कर रहा है, उनका भक्षण कर रहा है। काल दयाल पुरुष का भेष बनाकर, दया दिखाकर बाद में उन्हें मरवा रहा है।

साहिब आगे कह रहे हैं—

**द्वापर देखहु कृष्ण की रीती । धर्मनि परिखहु नाति अनीती ।।  
अर्जुन कहँ तिन्ह दया दृढ़ावा । दया दृढ़ाय पुनि घात करावा ।।  
गीता पाठ कै अर्थ बतलावा । पुनि पाछे बहु पाप लगावा ।।  
बंधु घातकर दोष लगावा । पाण्डो कहँ बहु काल सतावा ।।  
भेजि हिमालय तेहि गलाये । छल अनेक कीन्ह यमराये ।।  
बहु गंजन जीवन कहँ कीन्हा । ताको कहे मुक्ति हरि दीन्हा ।।**

साहिब कह रहे हैं कि द्वापर में पाण्डवों के साथ कैसा हुआ, सोचें। पहले अर्जुन के दिल में दया जागती है, पर बाद में वो सबको मार देता है। फिर बंधुओं की हत्या का पाप लग जाने से यज्ञ करवाया जाता है। फिर पीछे इसी दोष के कारण पाण्डवों को हिमालय में जाना पड़ता है। इस तरह बहुत दुर्दशा जीव की हो गयी और बाद में लोगों ने कहा कि मुक्ति मिल गयी। आगे कह रहे हैं—

**पतिव्रता वृंदा व्रत टारा । ताके पाप पहन औतारा ।।  
बलि ते सो छल कीन्ह बहूता । पुण्य नसाय कीन्ह अजगूता ।।**

छल बुद्धि दीन्हे ताहिं पताला । कोई न लखै प्रपंची काला ॥  
 लघु सरूप होय प्रथम देखाये । पृथिवी लीन्ह पुनि स्वस्ति कराये ॥  
 तीनि पग तीनों पुर भयऊ । आधा पाँव नृप दान न दियऊ ॥  
 तब लै पीठ नपाय तेहि दीन्हा । हरि ले ताहि पतालै कीन्हा ॥  
 यहि चर जीव देखि नहिं चीन्हा । कहै मुक्ति हरि हमको दीन्हा ॥

वृंदा पतिव्रता थी, पर उसका पतिव्रत धर्म भंग हुआ । उसी से फिर जग में अवतार हुआ । राजा बलि के साथ बहुत बुरा हुआ । पहले तो उसने लघु रूप देखा, पर बाद में बड़ा रूप देखकर चकित हो गया । खैर, उसे पाताल में स्थान मिला, पर संसारी जीव इसको भी समझ नहीं पाया । तो साहिब आगे फिर कह रहे हैं—

स्वर्गहिं धोखा नरकहिं जाहीं । जीव अचेत छल चीन्है नाहीं ॥  
 भक्त अनेक जगत महँ भयेऊ । काहू कहँ वैकुण्ठ न दयऊ ॥  
 नरक बास नहिं छूटै भाई । महा नरक भग जठर कहाई ॥  
 जिव अचेत हिय गम्य न करई । सबै आस वैकुण्ठहिं धरई ॥  
 विष्णु सरीखे को जग आही । बहु भगता किमि वरणौ ताही ॥  
 तिन्ह वैकुण्ठ वास नहिं पाया । कर्महि बसि पुनि नरक भोगाया ॥  
 सौ वैकुण्ठ चाहत नर प्रानी । यह यम छल बिरले पहिचानी ॥  
 जस जो कर्म करै संसारा । तस भुगतै चौरासी धारा ॥  
 मानुष जन्म बड़े तप होई । सो मानुष तन जात विगोई ॥  
 नाम बिना नहिं छूटे कालू । बार बार यम नरकहिं घालू ॥  
 नरक निवारण नाम जो आही । सुर नर मुनि लखत कोई नाहीं ॥  
 बिरलै सार शब्द पहिचाने । सतगुरु मिलै सतनाम समाने ॥

साहिब कह रहे हैं कि काल ने स्वर्ग का भी धोखा ही रखा, बड़े बड़े अच्छे जीवों को भी नरक में भेज दिया । जीव बड़ा ही अचेत है, समझ नहीं पाता है । कितने भक्त इस संसार में हुए, जिन्हें वैकुण्ठ नसीब

नहीं हुआ। नरकवास छूटता ही नहीं है और बार-बार गर्भद्वार में आने वाला महानरक भोगना पड़ता है। यह अचेतन जीव हृदय में विचार नहीं करता है, वैकुण्ठ की ही आस लगाए हुए है। वैकुण्ठ निवासी को भी सदा जो वैकुण्ठ नहीं मिल पाता, उस वैकुण्ठ को संसारी चाह रहे हैं। यम का यह छल कोई बिरले ही पहचान सकते हैं। जो जैसा कर्म करता है, उसे उसी के अनुरूप चौरासी भोगनी पड़ती है। मनुष्य जन्म बड़ें तप के प्रताप से मिलता है। ऐसा मानव-तन बेकार में जा रहा है। नाम के बिना यह जीव छूट नहीं सकता, काल बार-बार नरक में ही डालेगा। नरक से छुड़ाने वाला जो नाम है, उसे देवता, मुनि, मनुष्य आदि कोई भी नहीं जान पाते हैं। बिरले जन ही सार शब्द को जान पाते हैं। जिसे सद्गुरु मिल जाए, वो सत्य नाम में समा जाता है।

यह सुन धर्मदास जी ने कहा—

**हे साहिब तुमको शिर नावा । तुमतो मोहिं अलख लखावा ॥  
 उन साहेब हम तुमहू अहहू । वैसिहि बात तुमहु प्रभु कहहू ॥  
 मेष तीन दिय दरशन मोहीं । तीनों भेष मैं जानौं तोहीं ॥  
 सतगुरु प्रथम दरस मोहिं दीन्हा । हम कहँ आय कृतारथ कीन्हा ॥  
 भेष छिपाय बहुरि ओहि आये । सार बात बहु मोहिं सुनाये ॥  
 तिसरे तुम्ह आयउ तन धारी । हम हैं तोहरे दरश भिखारी ॥  
 तुमतो प्रभु बहु सुख दीन्हा । तुम ते प्रभु परिचय हम चीन्हा ॥  
 एक बात प्रभु कहहु बिलोई । कहहु दया करि धरहु न गोई ॥  
 चिउँटी बहुत जरी मम पाहीं । तुम प्रताप अघ पायो नाहीं ॥  
 औरौ कबहिं होइ जो ऐसी । हे प्रभु कहहु बने तब कैसी ॥  
 चेत अचेत पाँव तर परई । हे प्रभु दास कौने विधि तरई ॥**

कहा कि आपने मुझे सत्यपुरुष का भेद दिया। मुझे लगता है कि आप वही साहिब हैं, क्योंकि आप भी वैसी ही बात कर रहे हैं। मैं जान गया हूँ कि आपने ही मुझे तीन बार अलग अलग रूप में दरशन दिये हैं;

मैं समझ गया हूँ कि आप मेरा कल्याण करने आये हैं। आपने बड़े भेष धारण कर मुझसे सब रहस्य कहे हैं। मैं आपके दर्शन का भिखारी हूँ। आपने आकर मुझे बड़ा सुख दिया है। आपसे ही मैंने सत्पुरुष का भेद पाया है। पर साहिब एक बात मुझे अलग से समझाओ, छिपाना नहीं। हे साहिब! मेरे पाँव के नीचे बहुत सी चींटियाँ आकर मरी हैं, पर आपके प्रताप से मुझे पाप नहीं लगा। यदि अन्य किसी से कभी ऐसा पाप हो जाए तो हे प्रभु, तब कल्याण कैसे होगा? क्योंकि चेतन रहने पर भी चींटी पर पाँव तो पड़ ही जाता है। फिर वो दास कैसे तर सकता है?

साहिब ने कहा—

**धर्मदास निःसंशय रहहू । सद्गुरु ध्यान अस्थिर चित गहहू ॥  
जानि के जीव कबहिं नहिं मारो । भरोसा और दया उर धारो ॥  
जग महँ जीव घात बहुतेरे । जीव घात शिर पाप घनेरे ॥  
मारि मारि तन करै अहारा । जीव दया नहिं करै गँवारा ॥  
जिव घातिक बहुते दुख पावै । जनम जनम तेहि काल सतावै ॥  
काग देहि धरि निरघिन खाहीं । जनम अमित तेहि विष्टा माहीं ॥  
साधु देव भक्ष अंकुर आहीं । मीन माँस मद राक्षस खाहीं ॥  
कोटिक जप तप पुण्य कमावै । दया बिना नर मुक्ति न पावै ॥**

कहा—हे धर्मदास! संशय रहित हो जाओ, सद्गुरु का ध्यान करो। जानबूझ कर किसी जीव को नहीं मारो, अपने दिल में विश्वास और दया रखो।

इस संसार में जीव-हत्या करने वाले बहुत हैं; जीव हत्या का पाप भी बहुत बड़ा होता है। जो जीवों को मार-मार कर खाए, जीव दया न रखे, वो बहुत दुख पाता है, जन्म जन्म तक काल उसे सताता है। वो फिर कौवे की देही पाकर गंदे-गंदे जीवों को खाता है, कई जन्मों तक उसे विष्टा में ही रहना पड़ता है, सुअर और कुत्ते की योनि में वो आता है। उसे माँस ही प्रिय लगता है। साधु पुरुषों का भोजन अनाज है, माँस—



मछली तो राक्षस खाते हैं। चाहे कोई करोड़ों जप-तप और पुण्य कर्म कर ले, पर जीव दया के बिना मुक्ति नहीं हो सकती।

साहिब ने फिर समझाते हुए कहा—

**साधु सेवा जीव जन धारो । नाम ध्यान धरि काज सँवारो ॥  
तीरथ व्रत बहु करम कराहीं । सत्य भक्ति बिनु तरै जिव नाहीं ॥  
कोटि तीर्थ संतन्ह पद वासा । अँधा जीवहि नहिं विश्वासा ॥  
संत जाहि घर चरण पखारा । भूत पिशाच होय सब न्यारा ॥  
नौ ग्रह कर वसि नहिं चलाई । सबहिं विघ्न सदा टल जाई ॥  
ताकर फल कछु वरणि न जाई । जाहि गहि विश्वास करै सेवकाई ॥  
गुरु चरणोदक नित प्रीति से लेई । निहचै लोक पयान देई ॥  
गुरु हैं ब्रह्म अखण्ड अमानै । गुरु कहँ नहिं मानुष कर जानै ॥  
जहाँ फूल तहँ आवै वासा । जहाँ साधु तहँ प्रभुकर वासा ॥  
गुरु औ साधु सेवा चित लावै । सत्यनाम गहि लोक सिधावै ॥  
सत्यनाम सो बिनसे नाहीं । त्रिगुण जाल ते न्यार रहाहीं ॥  
त्रिगुण त्यागि चौथा पद भेटे । तब जरा मरण की संशय मेंटे ॥**

साधु सेवा और नाम ध्यान कर अपनी आत्मा का कल्याण करो। तीर्थ, व्रत आदि कितने भी कर लो, पर सत्य भक्ति के बिना जीव नहीं तर सकता। करोड़ों तीर्थ संत चरण में वास करते हैं, पर यह संसारी अँधा जीव विश्वास नहीं करता है। जिस घर में संत चरण रखते हैं, वहाँ भूत प्रेत नहीं आ सकते। नव ग्रहों का बस भी नहीं चल सकता और सभी विघ्न दूर हो जाते हैं। जिसके घर में संत चरण रखते हैं, यदि वो विश्वास के साथ उनकी सेवा करे तो उसके फल का वर्णन ही नहीं किया जा सकता। जो गुरु चरणामृत रोज़ ले, वो निश्चय ही सत्य लोक में जाता है। गुरु को परमात्मा करके मानना है, उन्हें मनुष्य करके नहीं मानना है। जहाँ फूल है, वहाँ बास आती है, ऐसे ही जहाँ साधु रहता है, वहाँ परमात्मा का वास होता है। जो गुरु और साधु की सेवा करे और

सत्यनाम को पकड़े रहे, वो अमर लोक में वास पा लेता है। सत्यनाम कभी नष्ट नहीं होता, वो त्रिगुण जाल से न्यारा रहता है। त्रिगुण को त्याग वो चौथे पद मुक्ति को पाता है, जनम-मरण का संशय उसका मिट जाता है।

यह सब ज्ञान सुन धर्मदास जी ने कहा-

**अब मोहि चीन्ह परी यम बाजी । तुम्हते भयउ मोर मन राजी ॥  
मोरे हृदय प्रीति अस आई । तुम्हते होइहै जिव मुक्ताई ॥  
तुमहीं सत्यकबीर हौ स्वामी । कृपा करहु तुम अंतर्यामी ॥  
हे प्रभु देहु परवाना मोहीं । यम तृण तोरि भजौं मैं तोहीं ॥  
मोरे नहीं अवर सो कामा । निसिदिन सुमिरौं सद्गुरु नामा ॥  
पीतर पाथर देव बहायी । सद्गुरु भक्ति करौं चितलायी ॥  
अरपौं शीस सर्वस सब तोहीं । हे प्रभु यमते छोड़ावहु मोहीं ॥**

कहा कि अब मुझे काल का खेल समझ आया है, आपसे ही मेरा मन शांत हुआ है। मेरे हृदय में ऐसा भाव है कि आपसे ही मेरे जीव का कल्याण होगा, क्योंकि मुझे लगता है कि आपही सत्य कबीर हैं; मुझ पर कृपा करो। हे प्रभु! मुझे नाम रूपी परवाना दो, मैं काल से नाता तोड़कर अब आपकी ही भक्ति करूँगा, मैं रात-दिन अब सद्गुरु का नाम ही जपूँगा, मुझे कोई और काम नहीं है। मैं पीतल के, पत्थर के देवता को छोड़ सद्गुरु की भक्ति ही हृदय से करूँगा। मैं अपना शीश आपको सौंपता हूँ, हे प्रभु! मुझे यम से छुड़ा लो।

यह सुन साहिब ने कहा-

**अब मोहि आज्ञा देहु धर्मदासा । हम गवनहिं सतगुरु के पासा ॥  
सतगुरु संग आइब तव पाहीं । तब परवाना तोहि मिलाहीं ॥**

कहा कि अब धर्मदास, मुझे आज्ञा दो, मैं सद्गुरु के पास जाता हूँ, उन्हीं के साथ अब तुम्हारे पास आऊँगा और तब ही तुम्हें नाम मिलेगा।

यह सुन धर्मदास जी ने कहा-

**हे प्रभु अब तोहिं जान न दैहौं । नहिं आवो तो मैं पछितैहौं ॥**

**पछताइ पछताइ बहु दुख पैहौं । नहिं आवहु तो प्राण गवैहौं ॥**

कहा कि अब मैं आपको जाने नहीं दूँगा, क्योंकि यदि आप नहीं आए तो मुझे पछतावा होगा। फिर पछता-पछताकर मैं दुख पाऊँगा, यदि आप नहीं आए तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगा।

**यह कह धर्मदास पल लाऊँ । जिन्दा गुप्त भये तेहिं ठाऊँ ॥**

**धर्मदास पुहुमी परु हारी । सतगुरु कहँ बहु कीन्ह गोहारी ॥**

**मोहिं सम को जग आहि अभागा । छुटे न देह ठगौरी लागा ॥**

**काह करौं कित दर्शन पाऊँ । बिनु दर्शन मैं प्रान गवाऊँ ॥**

जैसे ही धर्मदास जी ने पलक झपकी, साहिब वहाँ से गुप्त हो गये। धर्मदास जी पृथ्वी पर गिर पड़े, साहिब को पुकारने लगे। विलाप करते हुए कहने लगे कि मेरे समान संसार में अभागा कौन होगा, जिसके साथ इतना बड़ा धोखा हो गया और फिर भी प्राण छूट नहीं रहे हैं। सोचने लगे कि अब मैं उनके दर्शन कहाँ पाऊँ, बिना दर्शन के तो मैं मर जाऊँगा।

अब धर्मदास जी साहिब के विरह में तड़पने लगे, उदास रहने लगे, आँसू बहाने लगे। यह देख कोई उन्हें कुछ सलाह देता तो कोई कुछ।

**कोई कहै त्रिदेव अवराधौ । कोई कहै व्रत करि तन साधौ ॥**

**कोई कहै करु प्रतिमा सेवा । कोई तीरथ कोई जप तप भेवा ॥**

**कृत्रिम भक्ति जो सबै दृढ़ावै । सत्य सार पद नाहिं बतावै ॥**

**तब अकुलाय संसाधरि जोये । प्रगट नहीं गुप्त हिय रोये ॥**

**प्रति आश्रम गम्य उठी निरासा । जित तित चितवहिं धर्मदासा ॥**

**पुनि चितवन उत्तर दिशि कीन्हा । मूरति एक भिन्न तहँ चीन्हा ॥**

**धर्मदास तहँ बेगि सिधाये । प्रथम रूप को दरशन पाये ॥**

**धाय चरण गहि अति अदरागा । बूंद पाय चात्रिक जिमि पागा ॥**

धर्मदास जी की अवस्था को देखकर कोई उनसे कहता कि त्रिदेव

की आराधना करो, कोई कहता कि व्रत धारण करो, कोई कहता कि मूर्ति की पूजा करो, कोई तीर्थ तो कोई जप-तप आदि करने की सलाह देता। सभी पाखंड में ही उलझाने का प्रयास करते। यह देख धर्मदास जी अब साहिब के विरह में छिप-छिपकर रोने लगे। फिर उनके दिल में निराशा हुई और वे इधर उधर देखने लगे। फिर उत्तर की तरफ देखा तो एक मूर्ति सी दिखाई दी। धर्मदास दौड़कर वहाँ पहुँचे तो साहिब का पहला रूप देखा। धर्मदास जी साहिब के चरणों में लिपट गये। उन्हें ऐसा आनन्द मिला, मानो चातक को स्वाति का जल मिल गया हो।

साहिब ने तब धर्मदास को अपने हाथों से उठाया और कहा—

**कर गहि दास उठायेउ स्वामी। सुधा वचन कह अंतर्दामी॥**

**धर्मदास तुम्ह हंस सुहेला। मोहिं दरश कह कीन्हेउ मेला॥**

**इच्छा सफल भइ सुन तोरा। अब तुम दरशन पायउ मोरा॥**

साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! तुम बड़े प्यारे हंस हो, तुम्हारी इच्छा सफल हुई, जो तुम्हें मेरे दर्शन हुए।

धर्मदास जी ने कहा—

**हे प्रभु जौं दर्शन नहिं पावत। तौ हम निश्चै प्राण गवाँवत॥**

**अब प्रभु कीजे कृपा तुरं ता। दीजे बीरा अविचल संता॥**

कहा कि यदि मैं अब आपके दर्शन नहीं पाता तो निश्चय ही अपने प्राण गँवा बैठता। अब प्रभु मुझपर कृपा कीजिए, अपना नाम दीजिए।

साहिब ने कहा—

**सुन धर्मनि जो कहूँ सो मानो। तजि संशय धीरज चित आनो॥**

**करहु जाय संतन सनमाना। ता पीछे दैहों परवाना॥**

कहा कि जो मैं कहूँ, उसे मानो, सब प्रकार का संशय छोड़कर मन में धैर्य धारण करो। जाओ, अब संतों का सम्मान करो, फिर मैं तुम्हें नाम दूँगा।

धर्मदास जी ने कहा—

**हे प्रभु कहो सोई हम माने । करब जाई संतन्ह सनमाने ॥**

**हो प्रभु जो कतहूँ अब जाहू । जौ जीवित नहिं पइहाँ साहू ॥**

कहा कि जो आप कहेंगे, मैं करूँगा, जाकर अब संतों का सम्मान करूँगा। पर यदि अब आप कहीं गये तो इस साहू को जीवित नहीं पायेंगे।

यह कह धर्मदास जी अपने घर गये और संतों को बुलाकर उनका सम्मान किया, यथाशक्ति उनकी पूजा-आराधना की। फिर हाथ जोड़कर सब संतों को विदा किया, कहा कि यदि कोई भूल हो गयी हो तो क्षमा करें। सब संत जब अपने घर चले गये तो धर्मदास जी साहिब के पास आये।

साहिब ने कहा—

**धर्मनि जो चाहहु परावाना । आनहु आरति साज मुजाना ॥**

कहा कि यदि नाम चाहते हो तो पहले आरती का सामान लाओ। धर्मदास जी ने पूछा कि क्या-2 लाऊँ।

साहिब ने कहा—

**धर्मनि चाहिये नारियर पाना । मेवा सो अष्ट करू मिष्टाना ॥**

**चंदन चौक सुगंधि कराओ । कलशा पल्लौ पंच धराओ ॥**

**गोधृत वसन सकल शुभ चारू । साजि थार पुनि आरति बारू ॥**

**सिंघासन पुनि सेत बनाओ । झारी दल कपूर मेराओ ॥**

**श्वेत पुहुप केदली पनवारा । आनि बेगि जनि लावहुवारा ॥**

**रतना कंद इनि नगर महँ आहीं । गुड़ मिष्टान तिनहिं कर चाहैं ॥**

**धावहु वेगि तुरति लै आवहु । आनहु वेगि वार जनि लावहु ॥**

साहिब ने धर्मदास को आरती का सब सामान बता दिया और कहा कि रतना नाम की कोई औरत इस नगर में रहती है, उसके पास से गुड़ और मिठाई ले लेना।

धर्मदास जी चल पड़े।

**पदकंज टे क्यो चले विचारत कहाँ धौं रतना अहै ॥**

**कहँ पूँछि लीजे भवन उनकै निज हिये गुनता रहै ॥**

**तहँ आय रतना ठाढ़ि भयी मिष्टान लै कर जोरि कै ॥**

**भौ साहु येहु प्रसाद लीजै, नाम रतना मोर है ॥**

धर्मदास सोचते हुए जा रहे थे कि पता नहीं रतना कहाँ रहती है ! फिर विचार किया कि किसी से रतना के घर का पता पूछ लूँगा। एक जगह आए तो रतना हाथ जोड़े खड़ी मिली। उसने कहा—हे साहु ! यह प्रसाद ले लो, मेरा नाम रतना है।

यह सुन धर्मदास चकित हो गये।

**धर्मदास रह सकुचि चित, यह तो अचरज बात ॥**

**हो माता किमि जानेउ, कहहु सोइ विख्यात ॥**

धर्मदास जी सकुचा गये, सोचा कि यह तो बड़ी ही अचरज की बात है, पूछा—माता ! आपने यह सब कैसे जाना, कृपा करके मुझे बताओ।

रतना ने कहा—

**सुन धर्मनि हम नाहिं, यह लीला सतगुरु कियो ॥**

**हम उन सेवक आहि, जिन्ह तोहिं शब्द चिताइयो ॥**

कहा कि हम कुछ भी नहीं हैं, यह सब सद्गुरु की लीला है, मैं तो उनकी सेवक हूँ, जिन्होंने तुम्हें चिताया है।

तब धर्मदास जी माता को प्रणाम कर वहाँ से चले और सब सामान लेकर साहिब के पास पहुँचे। तब साहिब ने उसे आरती करने की विधि बताई, कहा कि आरती करो। आरती के बाद धर्मदास जी ने साहिब को दण्डवत बंदगी की और फिर साहिब ने उन्हें नाम दिया और गुरु का महत्व बताया, कहा कि गुरु के समान किसी को नहीं मानना, उन्हीं की भक्ति करनी है।

ज्यों कन्या रह पिता अवासा । कौतुक करहिं पूजहिं मन आशा ॥  
 बिना खसम कस आस बुझाई । अस प्रतिमा की पूजा भाई ॥  
 जब गुरु पूरा मिले मति सारा । उदै ज्ञान रवि छपित होय तारा ॥  
 ताते गुरुपद सुरति समाओ । सतगुरु ध्यान अभै पद पाओ ॥  
 गुरु ते अधिक न कोइ ठहरायी । मोक्ष पंथ नहिं गुरु बिन पाई ॥

साहिब ने कहा कि जैसे कन्या जब तक पिता के घर में रहती है, मन ही मन पति की आशा करती है । पर बिना पति के उसकी आस नहीं बुझती । ऐसे ही प्रतिमा की पूजा करना है । जब पूरा गुरु मिल जाता है, तो ज्ञान का सूर्य उदय हो जाता है और सब तारे छिप जाते हैं । इसलिए गुरु में ही सुरति को समाए रखो, गुरु का ही ध्यान करो । गुरु से अधिक किसी को नहीं मानो, क्योंकि हे धर्मदास ! गुरु के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती ।

साहिब से ज्ञान लेकर धर्मदास जी ने पूछा—

**विनती एक करौं प्रभु, कृपा करहु जगदीश ॥  
 दो सेवक जो तुम मिले, सो तो कहूँ नहिं दीश ॥**

कहा कि एक विनती है, जो आपके पहले दो सेवक मुझे मिले थे, वो फिर नहीं दिखे ।

यह सुन साहिब ने कहा—

**धर्मदास लेहु जानि, हम वो एकै थान है ॥  
 कहौ शब्द परमान, वो हम में उन माँहि हम ॥**

कहा कि मैं और वे एक ही हैं, मैं सत्य कहता हूँ कि वे मुझमें हैं और मैं उनमें हूँ ।

धर्मदास जी ने एक विनती की, कहा—

**हो प्रभु उन मोहिं बड़ सुख दीन्हा । तुम भये गुप्त राख उन्ह लीन्हा ॥  
 विरह सिंधू बूड़त उन्ह राखा । उन्ह दरशन की है अभिलाषा ॥**

कहा कि जब आप गुप्त हो गये थे तो उन्होंने मुझे सुख दिया था ।

मैं तो विरह समुद्र में डूबा हुआ था तो उन्होंने सहारा दिया था। इसलिए मेरे दिल में उनके दर्शन की अभिलाशा है।

साहिब ने कहा कि देख फिर।

**आप तीन रूप प्रकट दिखावा। एक तीन होय एक समावा ॥  
धरम दास अचरज है रहे ऊ। समिता होय युगल पद गहे ऊ ॥  
लीला देखि चकित भये दासा। पुनि विनती एक कीन्ह प्रगासा ॥**

साहिब ने अपने तीनों रूप धर्मदास को दिखाए, पहले साहिब एक से तीन हुए, फिर तीनों एक हो गये। यह देख धर्मदास को आश्चर्य हुआ, उन्होंने पुनः एक विनती की, कहा—

**सत्यलोक तुम्ह वरणि सुनावा। सोभा पुरुष हंसन सतभावा ॥  
कैसन देश राज वह आही। चित इच्छा प्रभु देखन ताही ॥**

धर्मदास जी ने कहा आपने मुझे जिस अमर लोक का वृतांत सुनाया था, वो कैसा देश है, मैं उसे देखना चाहता हूँ।

साहिब ने कहा—

**धर्मदास यह निरघिन काया। यह तन पुरुष दरश किमि पाया ॥  
तन ठीका जब पुनि है आई। सत्य लोक तब देखहु जाई ॥**

कहा कि यह तो नीच काया है, इससे परम पुरुष के दर्शन कैसे पाओगे! इसलिए जब उम्र पूरी हो जायेगी, तब सत्य लोक देखना।

धर्मदास ने कहा—

**धर्मदास गहि चरण निहोरा। हे प्रभु तृषा मिटावहु मोरा ॥  
चरण टेकि प्रभु विनवौं तोहीं। पुरुष दरश बिनु कल नहिं मोहीं ॥**

कहा कि मेरी प्यास बुझाओ, मैं आपसे विनती करता हूँ, मुझे परम पुरुष के दर्शन किये बिना अब चैन नहीं है।

धर्मदास का अविश्वास देख साहिब गुप्त हो गये।

**गुप्त भये प्रभु अविगति ताता। धर्मदास मुख आवै न बाता ॥  
मैं मूरख प्रतीति न कीन्हा। अस साहिब कहैं मैं नहिं चीन्हा ॥**



**अब कौने विधि दरशन पाऊँ । दरशन बिनु मैं प्राण गवाऊँ ।।  
चरणोदक बिनु करौं न ग्रासा । तजौं शरीर कहाँ धर्मदासा ।।  
दिवस सात लागि अन्न न खावा । भजन अखंड नाम लौ लावा ।।**

साहिब के गुप्त होने पर धर्मदास जी व्याकुल हो गये, उनके मुख से शब्द नहीं निकलता था। सोचने लगे कि मैंने साहिब पर विश्वास नहीं किया, मैंने उन्हें पहचाना नहीं। अब मैं किस तरह उनके दर्शन पाऊँ, क्योंकि दर्शन के बिना तो अब मैं मर जाऊँगा। तब उन्होंने निश्चय किया कि साहिब का चरणोदक लिए बिना खाना नहीं खाऊँगा, चाहे शरीर नष्ट हो जाए। सात दिन तक भोजन नहीं करूँगा, केवल नाम-भजन में लगा रहूँगा।

धर्मदास का प्रेम देख साहिब सातवें दिन प्रगट हुए। धर्मदास जी ने साहिब के चरण पकड़ लिए और रोने लगे। साहिब ने अपने हाथों से उनके शरीर को पकड़कर उठाया और धर्मदास को गले से लगा लिया। धर्मदास ने तब चरणोदक लिया और आचमन किया। तब साहिब ने कहा कि कुछ प्रसाद ग्रहण कर लो और फिर मेरे पास आ जाओ। धर्मदास जी ने आकर पूछा कि इतनी देर कहाँ रहे? साहिब ने कहा कि मैं कालिंजर देश में गया था। वहाँ के जीवों को समझाकर कहा है कि धर्मदास से आकर दीक्षा लें।

धर्मदास जी ने पुनः विनती की कि मुझे अमर लोक ले चलो। तब साहिब ने कहा—

**धर्मदास यह हठ का करहू । मानहुँ शब्द शीश पर धरहू ।।  
हमसों पुरुष सो ऐसी अहई । जल तरंग जल अंतर रहई ।।  
जिमि रवि औ रवि तेज प्रकाशा । तिमि माहिं पुरुष अंतर धर्मदासा ।।  
हमरी सुरति गहौ चितलायी । तबहीं पुरुष पद दर्शन पायी ।।  
शिष्य हृदय प्रतीति अस आनै । गुरु औ पुरुष भिन्न नहिं जानै ।।  
जौ लौंचित अस रीति न आवै । तौ लौं जिव नहिं लोक सिधावै ।।**

साहिब ने कहा—हे धर्मदास ! ऐसी हठ न करो, मेरे शब्द को मान कर शीश पर धारण करो । मुझमें और परम पुरुष में तो वैसा ही अंतर है, जैसे सूर्य और उसके तेज के बीच है । यानी मैं और परम पुरुष एक ही हैं । इसलिए दिल से मेरा ही ध्यान करो, तब ही परम पुरुष के दर्शन पा सकोगे । शिष्य के दिल में यही भाव होना चाहिए, ऐसी ही प्रीत होनी चाहिए कि गुरु और परम पुरुष को अलग अलग न समझे । जब तक ऐसी सोच नहीं आयेगी, तब तक जीव वहाँ नहीं पहुँच सकता ।

यह सुन धर्मदास जी ने कहा—

**हो प्रभु सत्य कहौं तोहि पाहीं । तुम्हते कछु दुचिताई नाहीं ॥  
मोरे तुमहिं पुरुष हौ स्वामी । यम ते छोड़ावहु अंतर्यामी ॥  
हो प्रभु बरणेउँ लोक की शोभा । ताते आहि मार मन लोभा ॥  
तव लीला बहुतै हम देखा । पुरुष दरश बिनु रहै हिय रेखा ॥**

कहा कि मेरे आप ही स्वामी हैं, यम से छुड़ाने वाले हैं । पर आपने लोक की शोभा का वर्णन किया, जिसके कारण मेरे मन में उसे देखने का लोभ उत्पन्न हो गया । आपकी लीला तो मैंने बहुत देखी, पर पुरुष के दर्शन के बिना मेरे हृदय में एक संशय रह गया ।

तब साहिब ने कहा कि यदि तुम्हारे मन में वहाँ जाने की इतनी इच्छा है, तो चलो । साहिब उसकी आत्मा को शरीर से निकाल वहाँ चले । शीघ्र ही वहाँ पहुँच गये । लोक की शोभा देख धर्मदास जी ने बड़ा सुख माना । मानो वहाँ असंख्य सूर्य और चंद्रमा उदित हों । जहाँ भी देखते, वहीं जगमग हो रहा था । देखकर हृदय संतुष्ट हो गया । फिर एक हंस उन्हें परम पुरुष के दर्शन को ले गया । जब परम पुरुष के दर्शन कर वे वहाँ आये तो देखा कि साहिब और परम पुरुष एक ही हैं, उनमें और परम पुरुष में कोई भेद ही नहीं है । वे बहुत लज्जित हुए ।

**पुरुष कबीर देखा एक भाई । धर्मदास पुनि रहे लजाई ॥  
पुरुष दरश करि आयेउ तहँवा । प्रथम कबीर बैठे रहै जहँवा ॥**

इहाँ कबीर बैठे पुनि देखा । कला पुरुष तन अचरज पेखा ॥  
 का अजगुत कीन्है ऊँ भाई । उहाँ मोहिं प्रतीति न आई ॥  
 कबीर पुरुष यम उहाँ छिपाये । सत्य पुरुष जग दास कहाये ॥  
 धाये चरण गहु अति सकुचायी । हे प्रभु हम परिचै अब पायी ॥  
 यह शोभा कस उहाँ छिपावा । कस नहिं जग महँ प्रगट दिखावा ॥

धर्मदास जी ने जब देखा कि परम पुरुष और कबीर साहिब में कोई भेद नहीं है तो बड़ें लज्जित हुए, कहा कि वहाँ मुझे विश्वास नहीं हुआ कि आप ही परम पुरुष हैं । हे सत्यपुरुष, आप जग में अपने को दास कहलाते हैं । वहाँ आपने अपनी यह शोभा कहाँ छिपा रखी है ? वहाँ प्रगट क्यों नहीं अपना यह असली रूप दिखाते, परदा क्यों करते हो ?

साहिब ने कहा—

धर्मनि जो वहि छबि जग जाऊँ । तो होंय विकल निरंजन राऊ ॥  
 सब जीव तब मोहि लौ लावै । उजरै भौ सब लोकहि आवै ॥  
 ताते गुप्त राखो जग भाऊ । शब्द संदेश जीवन समुझाऊँ ॥  
 शब्द परखि चीन्है मोहिं कोई । गहि प्रतीति घर पहुँचे सोई ॥

कहा कि यदि यह शोभा लेकर संसार में जाऊँगा तो निरंजन परेशान हो जायेगा, क्योंकि तब जीव मुझमें ही लौ लगाकर अमर लोक पहुँच जायेंगे । इसलिए मैं यह शोभा गुप्त रख रहा हूँ और नाम की डोरी देकर जीवों को समझा रहा हूँ । जो मेरा शब्द मानकर मुझे पहचान जाता है, वो मेरे नाम को पकड़ कर अपने सही घर में पहुँच जाता है ।

अब धर्मदास जी ने कहा—

हो साहिब अब उहाँ न जाही । यह सुख घर तजि कहाँ झुराही ॥  
 वहि यम देश अपरबल काला । नहिं जानौं धौं मति होय वेहाला ॥

धर्मदास जी ने कहा कि वो तो काल का देश है, अब मैं वहाँ नहीं जाना चाहता ।

यह सुन साहिब ने समझाया, कहा कि मैं सदा तुम्हारे संग रहूँगा, तुमने लोक की शोभा देख ली है, अब बाकी हंसो को भी यहाँ का संदेश दो।

तब धर्मदास जी तुरंत संसार में वापिस आ गये। वहाँ आकर साहिब के चरणों में गिर उनकी स्तुति करने लगे।

**धन्य साहेब सतगुरु तुम सत्य पुरुष अनादि हो ॥**

**तुव अमित लीला को लखै प्रभु सकल लोक के आदि हो ॥**

**त्रिदेव मुनि सनकादि नारद कोई ना लखि तुम पावई ॥**

**तेहि हंस भाग सराहिये जो नाम तुव लौ लावई ॥**

साहिब ने धर्मदास से कहा कि आगे तुम नाम देकर जीवों का कल्याण करना। कहा—

**जीवन शब्द चेतावहु भाई। चेतहिं जीव पुरुष लौ लाई ॥**

**लै जीवन सत्यभक्ति दृढ़ाओ। तब तुम सत्यपुरुष कहँ भाओ ॥**

**सवा लाख लै आरति करई। बोधहु जाहि लोक संचरई ॥**

कहा कि तुम जीवों को चिताना। जो जीवों को सत्यभक्ति में दृढ़ करता है, वो परमपुरुष को प्यारा लगता है। तुम सवा लाख रुपये लेकर आरती करवाना और नाम देना।

धर्मदास जी ने पूछा—

**हे साहिब मैं बूझो तोही। दया करि प्रभु कहिये सब मोही ॥**

**सवा लाख नहिं होय जेहि पाहीं। ताहि कहहु बोधब की नाहीं ॥**

कहा कि यदि किसी के पास सवा लाख रुपये न हों तो क्या उसे चिताऊँ या नहीं।

साहिब ने कहा—

**धर्मदास जनि ताहि प्रबोधो। सवा लाख अरपै तेहि बोधो ॥**

कहा कि जो इतने न दे, उसे नहीं चिताना, जिसके पास इतने हों, उसे ही नाम देना।

धर्मदास जी ने विनती की, कहा—

**हो साहेब तब बनिहैं नाहीं । सवा लाख बिनु जीव यम खाहीं ॥**

कहा हे साहिब ! तब तो काम नहीं बनेगा, क्योंकि जिसके पास सवा लाख नहीं होंगे, उसे तो काल खा जाएगा ।

तब साहिब ने कहा—

**सुनु धर्मनि जौ आधौ होई । करि आरति देउ पान सजोई ॥**

कहा कि चलो, जिसके पास इससे आधे भी होंगे, उसे भी नाम दे देना ।

धर्मदास जी ने कहा—

**हो साहेब भाषहु कछु थोरा । होय निस्तार जीवन बंदीछोरा ॥**

कहा कि कुछ कम करो, ताकि जीवों का कल्याण हो सके ।

तब साहिब ने कहा—

**धर्मदास जो विनती करहु । सवा लाख चौथाई धरहु ॥**

कहा कि यदि तुम विनती कर रहे हो, तो जिसके पास सवा लाख का चौथा हिस्सा भी होगा, जो सवा लाख का चौथा हिस्सा भी देगा, उसे भी नाम दे देना ।

धर्मदास जी ने पुनः कहा—

**हो समरथ यह दायी कीजै । बोझ थोर जीवन पर दीजै ॥**

**द्रव्यहीन जीव केहि विधि तरिहैं । यम राजा तेहि भक्षण किरहैं ॥**

कहा कि थोड़ी कृपा करो, जीवों पर इतना बोझा न डालो, जो धनहीन हैं, वे कैसे तरेंगे, उन्हें तो काल ही खायेगा ।

धर्मदास की पुनः विनती सुन साहिब ने कहा—

**धर्मनि चौथाहु चौथाई । यहि प्रमाण लै आरति लाई ॥**

कहा कि फिर सवा लाख के चौथे हिस्से का चौथा हिस्सा ले लेना ।

धर्मदास जी ने फिर कहा—

**अहो साहिब कलि जीव अयाना । भाषहु शब्द थोर परवाना ॥**

**भाषहु थोर तुव पद लौ लीना । कलि युग जीव द्रव्य के हीना ॥**

कहा कि कलयुग का जीव मूर्ख है, इतने पैसे दान नहीं करेगा। फिर कलयुग का जीव गरीब भी है, इसलिए थोड़ा कहो।

साहिब ने कहा—

**अहो धर्मन मानहु शिर नाई। अब जो कहा सो राखु दृढ़ाई॥**

**चौथाई कर जो चौथाई। तासु चौथाहु मान लेहु भाई॥**

**हम निःइच्छा चाव कछु नाहीं। है मर्याद गुरु सेवा चाहीं॥**

**साधु सेवा नहिं करिहैं। कहो सो जीव कौने विधि तरिहैं॥**

कहा कि अब जो कह रहा हूँ, उसे मान लेना। मैंने जो सवा लाख के चौथे हिस्से का चौथा हिस्सा कहा, उसका भी चौथा हिस्सा लेकर भी नाम दे देना। हे धर्मदास, मुझे कुछ नहीं चाहिए, पर यह मर्यादा के लिए कह रहा हूँ, गुरु सेवा चाहता हूँ। यदि जीव गुरु सेवा नहीं करेगा तो पार कैसे होगा?

पर धर्मदास जी को अभी भी ठीक नहीं लगा, इसलिए पुनः विनती करते हुए कहा—

**हो प्रभु मैं चित बहुत सकाऊँ। कत साहिब सो उत्तर लाऊँ॥**

**जाहि न होय शक्ति गुरु एता। सो जिव ऐसहि जाय अचेता॥**

**औरौ थोर कहो प्रभु राई। जेहि ते जिव न यम धरि खाई॥**

कहा कि मुझे अब दिल में बहुत लज्जा आ रही है, पर साहिब जिस जीव के पास इतना सामर्थ्य भी न हो तो वो जीव तो फिर अचेत ही रह जायेगा। इसलिए कृपा करो, थोड़ा और कम करो, ताकि जीव को काल न खा सके।

तब साहिब ने कहा—

**धर्मदास बहु कीन्ह निहोरा। कह्यो सो वचन मान लियो तोरा॥**

**यह जो कहे ऊँ चौथाई होई। तासु चौथाई करि आरति सोई॥**

कहा कि तुम जो इतनी विनती कर रहे हो तो मैं तुम्हारी बात मान लेता हूँ, इसलिए जो अब चौथा हिस्सा कहा, उसका भी चौथा लेकर नाम दे देना।

धर्मदास जी ने फिर पूछा—

**हो प्रभु कलि के जीव दरिद्रा । जाहि न होइहैं एतिक मुद्रा ॥  
सो कैसे तोहिं पैहै स्वामी । कहहु थोर प्रभु अंतर्यामी ॥**

धर्मदास जी ने फिर कहा कि कलयुग के जीव गरीब हैं, इसलिए जिनके पास इतने पैसे भी न हों तो फिर वे जीव आपको कैसे पायेंगे ! हे प्रभु ! कृपा करो और थोड़े पैसे कहो ।

तब साहिब ने कहा—

**धर्मदास बहु कियेहु महताई । सवा पाँच मुद्रा लेहु भाई ॥**

कहा कि तुम बहुत कह रहे हो तो सवा पाँच रुपये ले लेना ।

धर्मदास जी ने इतने पर भी कहा—

**हो प्रभु विनती करों बहोरी । जाहि ने एतिक किमि बंदी छोरी ॥**

कहा कि एक विनती है, जिसके पास इतना भी न हो तो !

साहिब ने कहा—

**सुनु धर्मन दोय नारियर आनै । सवा पाँच आधो लै ठानै ॥**

कहा कि फिर दो नारियल ले आएँ और सवा पाँच से आधे से ही आरती कर ले ।

धर्मदास जी ने फिर कहा—

**सवा पाँच आधो जेहि नाहीं । हो प्रभु सो जिव कैस तराहीं ॥**

कहा कि जिसके पास सवा पाँच से आधे भी न होंगे, वो जीव कैसे पार होगा !

तब साहिब ने कहा—

**धर्मनि जेहि इतनो नहिं होई । तासु प्रमोदधेहु कहौ बिलोई ॥**

सवा सेर मिष्ठान मँगाओ । पान सवा सै उत्तम लाओ ॥

सवा हाथ बस्तर पुनि श्वेता । अग्र पुहुप पूँगी फल चेता ॥

गोघृत शुचि दीपक बारी । बैठि सिंहासन नाम सुधारी ॥

यम तृण तोरहु बीरा दीजै । शक्ति होय तब आरति कीजै ॥

**शक्ति अछत नहिं आरति करई । भक्तिहीन बहु संकट परई ॥**

**माया ठगनी आहि रे भाई । यह काहू के संग न जाई ॥**

**जिन गुरु सेवा कहँ मन लावा । सो माया कहँ जीति सिधावा ॥**

साहिब ने कहा कि जिसके पास सवा पाँच से आधे भी न हों तो उसके लिए भी बताता हूँ। वो फिर मिठाई, गाय का घी, श्वेत बिस्तर आदि लाकर सिंहासन सजाए और तब आरती करे। फिर तुम उसका काल से नाता तोड़कर नाम देना। यदि कोई शक्ति होते हुए भी धन न दे तो फिर वो भक्ति भावना से हीन मनुष्य बहुत संकट पाता है। माया बहुत ही धोखेबाज है, यह किसी के साथ नहीं जाती। जो गुरु सेवा में मन लगाता है, वे ही इस माया को जीतकर अमर लोक को जा सकते हैं।

धर्मदास जी ने फिर एक बार विनती करते हुए कहा—

**हो प्रभु तुम सतपुरुष दयाला । अंतर्दामी दीन दयाला ॥**

**मोहि निश्चय तुव पद विश्वासा । यह माया सपने की आशा ॥**

**सवा लाख तुम मोहि बताओ । सवा करोड़ प्रभु आरति लायो ॥**

**औ जन सम्पति मोर घर आही । अरपौं सभै संतन जो चाही ॥**

**तुम प्रभु निःइच्छा नहिं चाहो । धन्य समरथ मर्याद दिदाहो ॥**

**सो जिव तो नरकै जायी । शक्ति अक्षत जो राखु छिपायी ॥**

**हो प्रभु कछु विनती अनुसारुँ । बक्सहु ढिठाई तो वचन उचारुँ ॥**

**सवा सेर भाषहु मिष्ठाना । औरौ वस्तु सवा सो पाना ॥**

**हो प्रभु जो जिव भिक्षुक होई । भीख माँग तन पालै सोई ॥**

**सो जिव शब्द तोहार न जानै । कहहु केहि विधि लोक पयानै ॥**

धर्मदास जी ने कहा कि आप तो सत्यपुरुष हैं, कृपालु हैं। मुझे आप पर विश्वास है, यह माया तो सपने के समान है। आपने मुझे सवा लाख कहा था, पर मैं सवा करोड़ से आरती करता हूँ। इसके अलावा और भी जितना धन मेरे पास है, सब आपको अर्पित करता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपको कोई इच्छा नहीं है, यह केवल आपने गुरु मर्यादा का पालन



करने के लिए कहा। आप धन्य हैं साहिब। हे साहिब! मेरी ढिठाई माफ करना, पर मेरी एक विनती है कि आपने कहा सवा सेर मिठाई और अन्य चीजें भी सवा सेर लेकर आरती करना, पर साहिब जो भिक्षुक होगा, जो माँग कर अपना पेट पालता होगा, वो तो आपका शब्द नहीं जान पायेगा, फिर कहो कि वो आपके लोक में कैसे पहुँचेगा!

यह सुन साहिब ने कहा—

**हो धर्मन जौ अस जिव होई। गुरु निज ओर करै पुनि सोई॥  
इतने बिनु जिव रोकि न राखा। छोरी बंध नाम तेहि भाखा॥**

कहा कि अगर कोई ऐसा जीव हो, उसे भी रोके नहीं रखना, उसे भी नाम देकर काल से छुड़ा लेना।

यह सुन धर्मदास खुश हो गये, साहिब की स्तुति करने लगे।

**तुम धन्य सद्गुरु जीव रक्षक काल मर्दन नाम हौ॥  
शुभ पंथ भक्ति दिढ़ायऊ प्रभु अमर सुख के धाम हौ॥**



**बलिहारी गुरु आपने, घड़ी घड़ी सौ सौ बार।  
मनुष से देवता किया, करत न लागी बार॥**

## 4. बीरसिंह को चेताया

साहिब ने कई राजाओं को चिताकर अमर लोक पहुँचाया। उन्हीं में से एक बीरसिंह भी थे। वे घमण्डी थे, इसलिए धर्मदास जी ने पूछा—

**राय बीरसिंह बड़ो अभिमानी। कैसे सेवा साहिब ठानी।।**

कहा कि वो तो बड़ा ही अभिमानी था, फिर उसने आपकी सेवा कैसे की!

साहिब ने कहा—

**बीरसिंह काशी को राजा। पहुँचि तहँ हम कीन गोहराजा।।  
प्रथम चल भक्त पर गयऊ। साधु समाज जहँ भक्ति करयऊ।।  
तब हम वचन एक कहि लीना। सकल भक्त के हिये मन दीना।।  
नामदेव के हि पुरुषहिं ध्याओ। भक्त करत का कर्म तुम  
लाओ।।**

कहा कि काशी के राजा बीरसिंह के पास जाने के लिए मैं वहाँ चला गया। पहले मैं वहाँ पहुँचा, जहाँ भक्त लोग इकट्ठा थे। नामदेव आदि भक्त भक्ति में लगे हुए थे। सब मिलकर राम-राम का जाप कर रहे थे। तब मैंने नामदेव से कहा कि आप किस पुरुष का ध्यान कर रहे हैं? यह सुन नामदेव ने कहा—

**कहे नामदेव साधु भुलावो। दूसरो पुरुष कौन ठहरावो।।  
हरि हर ब्रह्मा हैं बड़ देवा। तिनकी करै सकल जग सेवा।।  
वे जगकर्ता सब कछु अहहीं। वेद शास्त्र सबही कहहीं।।**

नामदेव ने कहा कि आप दूसरा पुरुष किसे कह रहे हैं? ब्रह्मा, विष्णु और महेश ही सबसे बड़ें देवता हैं, उन्हीं की सारा जग सेवा करता है। वेद, शास्त्र भी उन्हीं के लिए कहते हैं। वे ही जगत के कर्त्ता हैं। साहिब ने कहा—

हरि हर ब्रह्मा शक्ति उपायी । इनकी उत्पन्न कहहुँ बुझायी ॥  
 बिना भेद सब ज्ञानी फूले । ताते काल बँधन जीव झूले ॥  
 एक देश है अमर अभेदा । ताका कोई न जाने भेदा ॥  
 ताका मरम भक्त नहिं जाना । किरतम कर्त्ता से मन माना ॥  
 ताही देश से हम चले आये । सत्यनाम का सौदा लाये ॥

साहिब ने पूछा कि जिन्हें तुम श्रेष्ठ कह रहे हो, उनकी उत्पत्ति किसने की? रहस्य जाने बिना ज्ञानी लोग यूँ ही फूले-फूले फिर रहे हैं । इसलिए काल के बँधन में जीव झूल रहा है । एक देश है, जो अमर है, उसका रहस्य कोई भक्त नहीं जानता है और झूठे संसार के कर्त्ता से प्रीत करता है । मैं तो उस अमर देश से आया हूँ और साथ में सत्य नाम का सौदा लेकर आया हूँ ।

इतने में बीरसिंह बघेल अपने महल की छत पर आये और वहाँ से सब भक्तों पर नज़र डाली, देखा कि सभी आनन्द से भजन गा रहे हैं, पर एक भक्त सबसे अलग बैठा हुआ है, उसकी काया भी बड़ी ही श्वेत है, मानो परमात्मा की छवि उसमें हो । यह देख राजा ने चोबदार (सेवादर) को बुलाया और कहा कि नामदेव को बुला लाओ । चोबदार ने नामदेव को कहा कि राजा साहब बुला रहे हैं । नामदेव चोबदार के साथ राजा के पास आया । राजा ने नामदेव से साहिब के लिए पूछा कि यह भक्त कौन है? यह सबसे अलग क्यों बैठा हुआ है?

**श्वेत रूप जो भक्त है, सो क्यों रहे ऊ न्यार ॥**

राजा ने कहा कि जो श्वेत रूप वाला जो भक्त है, वो आप सबसे अलग क्यों बैठा हुआ है?

नामदेव ने कहा—

राजा सुनो वचन यक मोरा । हम तुम हरि हर ब्रह्मा दोरा ॥  
 ताकर भक्ति करे वह हाँसी । कहै पुरुष यक और अविनासी ॥  
 श्वेत वस्त्र औ श्वेत शरीरा । है जुलाहा नाम कबीरा ॥

किरतम कहे सकल सब देवा । कहे साँचु देख नहिं सेवा ॥  
 मूर्ति कूटि पाथर का लाई । कारीगर छाती दे पाई ॥  
 काँसा ताँबा मूर्ति बनावा । तामें कैसे ब्रह्म समावा ॥  
 वह तो कहे हम पुरुष अभेवा । नहिं कोई जाने हमरो भेवा ॥  
 आप अपन पौ बहु विधि थापै । आपै देव सेवक पुनि आपै ॥  
 भक्ति ज्ञान योग को भेवा । तीरथ व्रत तप अरु सब देवा ॥  
 सबको काल जाल बतलावे । एको को नहिं मन में लावे ॥  
 हम सन बहु विधि वाद विवादा । नहिं मानै वह अनहद नादा ॥

नामदेव ने राजा से कहा कि हम और आप त्रिदेव की भक्ति करते हैं, पर वो कहता है कि परमात्मा कोई और है । उसका नाम कबीर है; वो जुलाहा है । वो कहता है कि पत्थर को काटकर मूर्ति बनाई गयी, कारीगर ने छाती पर पाँव रखकर उसका निर्माण किया; काँसे, ताँबे की मूर्ति बनाई; भला उसमें परमात्मा कैसे समा सकते हैं ! वो तो अपने को परमात्मा कहता है । अपने को ही परमात्मा कहकर फिर अपने को ही दास भी कहता है । इस तरह अपने को ही स्थापित करता है । वो हमारे भक्ति, योग, तीर्थ, व्रत, जप, तप, आदि सबको काल का जाल बताता है, एक को भी नहीं मानता । उसने हमसे बड़ा वाद-विवाद किया है; वो तो अनहद नाद को भी नहीं मानता ।

जब राजा ने नामदेव के मुख से ऐसी बातें सुनीं तो चोबदार को कहा कि कबीर को बुला लाओ । चोबदार ने साहिब के पास आकर विनती की, कहा कि आपको राजा ने बुलाया है ।

साहिब ने कहा—

ना हम पंडित ना परधाना । ना ठाकुर चाकर तेहि जाना ॥  
 पैसा दमरी नाहिं हमारे । केहि कारण मोहिं राय हंकारे ॥  
 गरज होय तो यहाँ चलि आवै । हम तो बैठे भजन करावै ॥

साहिब ने कहा कि मुझे राजा ने क्यों बुला भेजा है ! मैं न तो कोई

पंडित हूँ, ना तो राजा का नौकर हूँ। मेरे पास कोई पैसा रूपया भी नहीं है। फिर राजा ने मुझे क्यों बुलाया है? यदि उसे गरज है, तो खुद यहाँ चला आए, मैं तो यहाँ भजन कर रहा हूँ।

यह सुन चोबदार को क्रोध आ गया। वो तुरंत राजा के पास चला गया और जाकर सब बात बता दी, कहा—

**भक्त न आवे मोर हँकारे । कुछ भय भी नहीं राखु तुम्हारे ॥**

**कहैं हमारे कौन है काजा । तृणहि समान गिनत हौं राजा ॥**

चोबदार ने कहा कि वो भक्त मेरे बुलाने से नहीं आता और ना ही आपका कुछ भी भय रखता है। वो तो कहता है कि राजा को मैं तिनके समान गिनता हूँ।

यह सुन राजा ने मन ही मन विचार किया—

**वो तो परम पिता ही होई । अन्य कोई होय तो आवै सोई ॥**

**मान बड़ाई जो नर पागे । करत खुशामद नृपति आगे ॥**

**सत्य भाव जाके उर आवे । मान बड़ाई लोभ सब जावे ॥**

**वह तो सत्य भक्ति चित दीन्हा । कारण कौन त्रास मम कीन्हा ॥**

**यहि विधि कीन विवेक विचारा । तबहीं राजा आप सिधारा ॥**

राजा ने विचार किया कि वो तो कोई महान पुरुष ही हो सकता है। यदि वो कोई और होता तो मेरे बुलाने पर जरूर आता। जिसके हृदय में सत्य भाव होता है, उसमें मान-बड़ाई, लोभ आदि नहीं रहता। जो मान-बड़ाई चाहता है, वही राजा की खुशामद करता है। राजा ने मन में विचार किया कि यदि कबीर नहीं आता है तो हम कबीर के पास चलते हैं। वो तो सत्यभक्ति में मग्न है, मेरा डर क्यों मानेगा! यह सोच राजा स्वयं चला।

साहिब ने राजा को आते देखा तो एक कौतुक किया।

**आवत देखा जब हम राई । तब हम लीला एक बनाई ॥**

**आसन अधर कीन तेहि वारा । सवा हाथ धरती से न्यारा ॥**

साहिब ने राजा को आते देखा तो धरती से सवा हाथ ऊपर आसन लगाकर बैठ गये।

**नृपति देखि अचरज मन कीन्हा । यह तो पुरुष अगम कछु चीन्हा ॥  
कीन अवलोकन जग हम सबहीं । ऐसे पुरुष न देखे कबहीं ॥  
धन्य धन्य अस्तुति सब गावैं । धन्य कबीर चरण सब ध्यावैं ॥  
राजा चरण पकड़ दोउ भाई । धन्य धन्य नृप करई बड़ाई ॥  
कहे राय धन भाग हमारा । दर्शन दीन्ह आय करतारा ॥**

साहिब को धरती से सवा हाथ ऊपर आसन लगाए देख राजा को अचरज हुआ, सोचा कि यह तो कोई अगम पुरुष दिखता है। मैंने संसार में बड़े पुरुष देखें हैं, पर ऐसा कोई नहीं दिखा। सब साहिब की स्तुति गाने लगे, धन्य कबीर, धन्य कबीर कहने लगे। राजा ने साहिब के चरण पकड़ लिए, कहा कि मेरा बड़ा भाग्य है, जो आपने मुझे दर्शन दिये। राजा ने विनती की, कहा कि अब मेरे महल में चलिए।

साहिब ने कहा—

**कहैं कबीर तुम अभिमानी राजा । तहाँ नहिं कोई हमरो काजा ॥  
तुरी सवा लक्ष सँग तोरे । लक्ष सवा दो प्यादा तोरे ॥  
हस्ती चलत सहस तव संग । निशि दिन भूले कामिनि रंगा ॥  
हम भिक्षुक जानै संसारा । कौन काज है तहाँ हमारा ॥**

साहिब ने कहा कि वहाँ मेरा क्या काम! तुम अभिमानी राजा हो; तुम्हारे साथ सवा लाख घोड़े हैं, सवा दो लाख तुम्हारे सिपाही हैं, हज़ार हाथी हैं और रात दिन तुम स्त्री के संग में रहते हो। सब जानते हैं कि मैं तो भिक्षुक हूँ; मेरा वहाँ क्या काम!

यह सुन राजा ने कहा—

**हम हैं पापी अधम अजाना । तव कृपा बिनु काल धरि ताना ॥  
देइ उपदेश प्रभु मोहि बचावो । पाप जाल ते वेगि छुड़ाओ ॥  
माया तिमिर नैन पट लागी । दर्शन पाय भये अनुरागी ॥**

**करो दया अपनो करि लीजै । दास जानि आयसु प्रभु दीजै ।।  
तुमरी कृपा सुनहु हो साहब । अस विश्वास भवहि तरि जायब ।।  
दीन जानि मंदिर पगु धारो । भक्तराज तुम वेगि पधारो ।।**

राजा ने कहा कि हे सद्गुरु! मैं तो पापी जीव हूँ, आपके बिना काल मुझे सतायेगा। आप मुझे ज्ञान देकर काल से बचा लो। मेरी आँखों में अँधकार की पट्टी लगी हुई है। आपके दर्शन से मेरे मन में प्रेम जागा है। अब मुझपर दया करके अपना दास जानकर आशीर्वाद दो। मुझे विश्वास है कि आपकी कृपा से मैं भवसागर से पार हो जाऊँगा। मुझे दीन जान मेरे घर में चरण रखो।

**बहुत अधीन जब राजा देखा । चलन विचार कीन तब लेखा ।।  
ततक्षण राजा हस्ति मँगावा । लै हमहीं तब हस्ती बैठावा ।।  
गजते आसन अधरहिं धारा । चले राय तब बजे नगारा ।।  
जबै राय मंदिर लै गयऊ । तबै रानि कहँ तुरंत बोलेऊ ।।  
मानिक देइ रानी चलि आयी । तासे राजा बात सुनाई ।।**

जब साहिब ने राजा को बहुत अधीन देखा तो उसके साथ चलने का विचार किया। उसी समय राजा ने हाथी मँगाया और उस पर साहिब को बैठाया। साहिब ने हाथी से ऊँचा आसन ही लगाया। जब महल में पहुँचे तो राजा ने अपनी श्रेष्ठ रानी मानिकदेई को बुलाया। रानी तुरंत ही राजा के पास चली आई। राजा ने उसे सारी बात सुनाई, कहा कि साहिब ईश्वर हैं, भक्त रूप में आकर दर्शन दिया है, इनके चरण पखारो।

तब रानी ने साहिब के चरण धोये, प्रसाद लाया। फिर राजा ने भी प्रसाद लिया। राजा के साथ साहिब बाहर आए। तब वहाँ नामदेव आए और साहिब से पूछा—

**कहहु कबीर मोहि समुझाई । कहँ तव गुरु शब्द कित पायी ।।  
साहिब कौन जाहि तुम ध्यायो । कहँवा मुक्ति सुरति कित लाओ ।।**

**कौन भाँति यम से जिव बाँचे । भिन्न भिन्न कहहू मोहि साँचे ॥  
आप न समझो बोधो राजा । राम बिना होय जीव अकाजा ॥**

नामदेव ने साहिब से कहा कि आपका गुरु कौन है और आपने नाम कहाँ लिया? वो साहिब कौन है, जिसकी आप बात कर रहे हैं, जिसका आप ध्यान कर रहे हैं? आप ध्यान कहाँ लगाते हैं? किस तरह यह जीव काल से बच सकता है? मुझे अलग अलग करके सब बताओ? आप खुद तो समझ नहीं रहे हैं और राजा को ज्ञान दे रहे हैं, पर राम के बिना जीव का कल्याण नहीं हो सकता है।

यह सुन साहिब ने कहा—

**नामदेव भूले तुम जैसे । हमको मति जानहु तुम तैसे ॥**

साहिब ने कहा—हे नामदेव! जैसे तुम भूले हुए हो, वैसे मुझे न समझो।

**पूजहिं हरि हर देव, जड़ मूरति पूजत बहै ॥**

**निशिदिन लावत सेव, जो रक्षक भक्षक अहै ॥**

कहा कि जिसको आप रक्षक समझ रहे हैं, वो ही तो भक्षक है। साहिब ने उसे काल का जाल समझाकर सच्चे साहिब का भेद कहा।

**नामदेव तब सुनत लजाने । पाये नहिं भेद मनहिं पछताने ॥**

नामदेव यह सुन लजा गये, क्योंकि उन्हें इसका भेद मालूम नहीं था। लज्जा के मारे वे उठ गये।

तब राजा ने साहिब से कहा—

**तब राजा अस वचन उचारा । हम सँग साहिब चलो शिकारा ॥**

**आगे सेन चली सब साजा । हस्ती बैठि चले गुरु राजा ॥**

राजा ने कहा कि मेरे साथ शिकार खेलने चलो। सेना सहित राजा शिकार के लिए निकला। आगे आगे सेना चली, पीछे पीछे राजा साहिब के साथ चला। तब साहिब ने राजा से कहा—



**जबही राजा चले रिंगायी । तब हम तासों बात सुनायी ॥**

**राजा संग मोहि लै जाओ । जीव एक मारन नहिं पाओ ॥**

साहिब ने कहा कि मुझे अपने साथ ले जा रहे हो, पर याद रखो कि एक भी जीव तुम मार नहीं पायोगे ।

साहिब ने राजा को समझाया कि यह मानव का धर्म नहीं है । पर राजा को समझ नहीं आई । उसने घोड़ा दौड़ाया और चल पड़ा । पर एक भी जीव राजा के फँदे में नहीं आया, जिससे राजा क्रोध से जल उठा । शिकार खेलते खेलते राजा बहुत दूर निकल गया, पर एक भी जीव उसे नहीं मिला । अब प्यास लगी, पर वहाँ कहीं पानी न मिला, जिससे राजा तड़पने लगा । राजा की सारी सेना भी प्यास से तड़पने लगी । राजा ने अपने कुछ सिपाही पानी की तलाश करने भेजे । राजा विचार करने लगा कि आज एक भी शिकार नहीं मिला, यह प्रभु ने कैसी नाराज़गी जताई !

यह देख साहिब ने विचार कर एक कौतुक किया ।

**तेहि अवसर हम कीन विचारा । राय प्रतीति देखों यहि वारा ॥**

**बीरसिंह देव बघेला राजा । देइ प्रतीति करों यहि काजा ॥**

**बिना प्रतीति भक्ति नहिं होई । बिना भक्ति जिव जाय विगोई ॥**

**बिनु भक्ति गुरु नाहीं भेटे । बिनु गुरु संशय नाहीं मेटे ॥**

**बिनु मेटे हिय संशय भाई । काल दयाल कहु को विलगाई ॥**

**करे प्रतीति नर सो पावैं । पाइ श्रद्धा गुरु शरणहिं जावैं ॥**

**गुरु के वचन जाहि विश्वासा । फिर नहिं होय नरक में वासा ॥**

**गुरु बिनु मुक्ति न पावत कोई । चौरासी भय मिटत न लोई ॥**

**याते हम सब कीन्ह उपाई । राजा मन प्रतीति जेहि आई ॥**

तब साहिब ने विचार किया कि राजा को विश्वास दिलाता हूँ, क्योंकि बिना विश्वास के भक्ति नहीं हो सकती है और बिना भक्ति के जीव का नाश हो जाता है । बिना भक्ति के गुरु को नहीं पाया जा सकता, बिना गुरु को पाय संशय दूर नहीं होता, बिना संशय दूर हुए काल पुरुष

और परम पुरुष में अंतर मालूम नहीं पड़ता। जिसके मन में विश्वास हो जाए, उसका चौरासी का बँधन टूट जाता है। जिसका गुरु के वचनों पर विश्वास है, वो फिर नरक में नहीं पड़ता। गुरु के बिना कोई मुक्ति नहीं पा सकता। इसलिए मैं वही उपाय करता हूँ, जिससे राजा के मन में विश्वास हो।

**सरवर रच्यो अनुपम ठामा। बाग बगीचा औ लखरामा ॥**

**नाना भाँति फूली फुलवारी। बहु मेवा लागे तेहि बारी ॥**

तब साहिब ने वहाँ पास में एक सरोवर की रचना की, पास में एक सुंदर बगीचा भी बनाया, जिसमें नाना भाँति के फूल पेड़ों पर लगे थे। इधर राजा की सब सेना पानी के बिना व्याकुल हो गयी थी। साहिब ने राजा से कहा—

**तब हम कहे राय सुन बाता। सत्य वचन भाखूँ विख्याता ॥**

**उत्तर दिशा राय पगु धारो। थोड़ हि दूर जल बहे अपारो ॥**

साहिब ने कहा कि उत्तर दिशा में थोड़ी दूर बहुत सारा जल है, आप सारी सेना सहित वहाँ चलो।

यह सुन राजा ने कहा—

**सतगुरु वचन कहो जनि ऐसो। पाहन ऊपर जल बह कैसो ॥**

**साहिब कहु जनि ऐसी बानी। हँ से लोग गुरु झूठ बखानी ॥**

कहा कि हे सद्गुरु! ऐसी बातें मत करो, भला पत्थर के ऊपर जल कैसे बहेगा! यदि आप ऐसा कहेंगे तो लोग हँसेंगे, कहेंगे कि गुरु झूठ कहते हैं। इतने में राजा के दिवान ने कहा—

**राय दिवान कहे अस बाता। गुरु के वचन झूठ नहिं जाता ॥**

**कहत दिवान जोरि दोउ हाथा। गुरु के वचन सत्य धरु माथा ॥**

राजा के दीवान ने कहा कि गुरु के वचन झूठे नहीं हो सकते हैं, उन्हें सिर पर रखो, उनपर विश्वास करो। दीवान के ऐसे वचन सुन राजा को पछतावा हुआ, उसने साहिब से कहा—

**करो क्षमा सुनु रे गुरुराई । दास गुनाहहि देहु बहाई ॥**

**जस कहिहौ सोई हम करिहैं । वचन तुम्हार सदा अनुसरिहैं ॥**

राजा ने कहा कि मुझे क्षमा कर दो, मेरा गुनाह माफ कर दो। अब आप जैसा कहेंगे, मैं वैसा ही करूँगा, सदा आपके वचन को मानूँगा।

तब साहिब ने कहा कि अब उत्तर दिशा में सेना सहित चलो। चलते समय राजा ने दूर से ही देखा कि एक सुंदर-सा बाग है, जहाँ की शोभा बड़ी निराली है। पास के सरोवर में राजा चला गया।

**सरवर निकट राय चलि जाई । देखत बाग रहै हरषाई ॥**

**ऐसी शोभा बनी बनायी । देखत बनै बरनि नहिं जायी ॥**

यह सब देख राजा बड़ा खुश हुआ। भाँति-2 के वहाँ फल लगे हुए थे। ऐसी शोभा थी कि देखते ही बनती थी, कही नहीं जा सकती।

तब सेना सहित राजा ने जल ग्रहण किया और फल खाए। ऐसे फल कि किसी ने भी पहले नहीं खाये थे। और बगीचा ऐसा था कि जहाँ न सर्दी थी न गर्मी।

**राजा प्रजा सब करै बड़ाई । काह कहौं कछु कहत न जाई ॥**

**जैसा मेवा सत्यगुरु दीना । नहिं मिल सो सुरलोकहिं चीन्हा ॥**

**खात खात सो जनम सिराई । नहिं देख्यो अस मेवा भाई ॥**

**लेइ प्रसाद जल अचवन कीन्हा । दुख संताप भुलाय सो दीन्हा ॥**

**फिरन लगे सो बगीचा माहीं । नहिं गर्मी नहिं शीत तहाँहीं ॥**

.....तब साहिब ने राजा से कहा कि अब अपने घर जाओ और मैं अपने अमर लोक में जाता हूँ।

**तब मैं कह्यो सुनो हो राजा । सेना सकल भयो सब काजा ॥**

**होय असवार जाहु घर राई । जहँ को जल तहँ देऊँ पठाई ॥**

**अब हम अपने लोक सिधायब । सत्य पुरुष का दर्शन पायब ॥**

**वहाँ की शोभा अनन्त अपारा । शिव ब्रह्मा नहिं पावत पारा ॥**

कहा कि इस जल को भी जहाँ से लाया है, वहाँ पहुँचा देता हूँ। मैं भी अब अपने देश अमर लोक में जाता हूँ। वहाँ की शोभा बड़ी ही निराली है। त्रिदेव आदि भी उसका पार नहीं पा सकते।

**राजा चरण परे अकुलायी। अब सतगुरु जनि करहु दुरायी ॥  
अब स्वामी मंदिर पगु दीजै। सकल जीव अपना कर लीजै ॥  
अब मन जनि दोय करि जानो। हम सेवक तुम निज कै मानो ॥**

यह सुन राजा को साहिब से विछुड़ने का भय हुआ। उसने विनती की, कहा कि अब दूर मत करो। अब आप मेरे महल में चरण रखें और सभी जीवों को अपना बना लो।

**राय प्रतीति बहुत मन भाई। देखि प्रीति चलन फरमाई ॥  
कुंजर राय भये असवारा। ले हमहीं पुनि तहाँ बैठारा ॥  
ततक्षण राय वचन कहि दीना। भरि भरि बर्तन सबही लीना ॥  
छोड़ि सरोवर चले रिंगायी। क्षणहि सरोवर छार उड़ायी ॥  
जब राजा पुनि पाछे निहारा। नहीं सरोवर उड़ै तहँ छारा ॥**

राजा का विश्वास और प्रेम देख साहिब ने उसकी बात मान ली और उसके साथ चलने को तैयार हो गये। हाथी पर सवार होकर राजा ने साहिब को भी वहाँ बिठाया। उसी समय राजा ने सबको कहा कि बर्तन भर-भर कर यह जल और मेवे ले लो। सबने बर्तन भर लिये। जब सरोवर को छोड़ आगे बढ़ें तो साहिब ने सरोवर को अपनी जगह पहुँचा दिया और वहाँ धूल उड़ने लगी। राजा ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा तो सरोवर नहीं था, केवल धूल उड़ रही थी। यह देख राजा चकित हो गया और साहिब की स्तुति की।

तब साहिब को लेकर राजा महल में आया।

**चले राय महल पग दियऊ। सतगुरु को आगे करि लयऊ ॥  
मंदिर कंचन पलंग बिछावा। लै सतगुरु तहाँ बैठावा ॥  
मानिकदेइ रानी चली आयी। कहै राय रानी गहु पायी ॥**

वहाँ सोने के पलंग पर साहिब को बिठाया और मानिकदेइ रानी को बुलाकर साहिब के चरणों में झुकाया, कहा—

**चरण टेकि चरणामृत लीजै । गुरु की कृपा अमृत रस पीजै ॥  
लोक लाज तुम तजहु बड़ाई । गुरु कबीर की शरणे आई ॥**

राजा ने रानी से कहा कि साहिब के चरण पड़कर उनका चरणामृत लो और उसे अमृत समझकर पी लो । लोक लाज और मान को त्यागकर कबीर साहिब की शरण ग्रहण करो ।

तब राजा ने रानी से वहाँ साहिब के सरोवर रचने के कौतुक का बखान किया । फिर राजा ने साहिब से विनती की, कहा कि मुझे अपना अमर लोक दिखा दो ।

साहिब ने कई ढंग से परख कर देख लिया कि राजा को विश्वास हो गया है । यह देख उसी समय उसके कान में शब्द सुनाया और उसे लेकर अमर लोक को गये । लोक की शोभा देख राजा चकित हो गये । वे इतने मग्न हो गये कि कहा कि अब मुझे यहीं रहने दो, वापिस संसार में मत ले जाओ । जब राजा ऐसे नहीं माना तो साहिब ने जबरन उसकी बाँह पकड़ी और वापिस संसार में आए ।

**तब हम कहा सुनु राय सुजाना । तुम राजा सत्यलोक भुलाना ॥  
राजा मानो कहा हमारा । चलो तहाँ जहाँ राज तुम्हारा ॥  
बरबस बाहँ गही तब राई । ले राजा तहँ वा बैठाई ॥  
दोय कर जोरि राय रहे ठाढे । बहुत प्रेम हरष मन बाढे ॥**

साहिब उसे जबरन संसार में ले आए, कहा कि अपना राज पाट सँभालो । राजा दोनों हाथ जोड़कर साहिब के सम्मुख खड़ा हो गया, उसके मन में साहिब के प्रति बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ । तब उसने कहा—

**अब लगि साहिब मैं नहिं जाना । सकल भक्त सम तुमको माना ॥  
अब हम जाना भेद तुम्हारा । सोई करहु जेहि हंस उबारा ॥  
राजा कहे कौन विधि करऊँ । सकल द्रव्य गुरु चरणे धरऊँ ॥**

**जाते जीव काल ते बाँचे । सोई जतन करो गुरु साँचे ॥**

कहा कि अब तक मैंने आपको नहीं जाना था, आपको अन्य भक्तों के समान ही समझा था। अब मैंने आपका भेद जान लिया है, अब मैं वही करूँगा, जिससे मेरी आत्मा का कल्याण हो। मैं अपना सारा धन आपके चरणों में रखता हूँ। अब आप वही उपाय करें, जिससे मेरा जीव काल से बच जाए।

.....साहिब कहते हैं कि वहाँ उस लोक में जाते समय यम रोकने का प्रयास करते हैं, पर सत्यपुरुष का नाम देख वे भाग जाते हैं।

**चले हंस सतलोक को, सुरति शब्द गहि डोर ॥**

**दोय पाँजी के बीच में, बैठ काल तहँ चोर ॥**

काल रास्ता रोके बैठा है। बड़ें नाके लगे हैं।

**धरती माथ स्वर्ग को नाका । तहाँ दोय पाँजी है बाँका ॥**

**तहँवा दूत रहत है भाई । पुरुष नाम सुनि निकट न आई ॥**

**युग दानी ठाढ़े बटपारा । मागै देहू जीव हमारा ॥**

**प्रथमहिं हैं युगदानि जगाती । दूजे पाछे बज्जरघाती ॥**

**तीजे मृत्यु अंध बटपारा । परलंबित चौथे सरदारा ॥**

**पँचयें दूत स्वयंबर जानी । पाँचो यम जिव छे दत आनी ॥**

**जा घट नाम धनी का होई । सो हंसा नहिं बूझे सोई ॥**

**नाम पान हृदय में गहई । सो हंसा यम सो निर्बहई ॥**

पहला नाका स्वर्ग में है, वहाँ दो बदमाश हैं। वहाँ दूत बैठे हैं, पर साहिब का नाम सुन वे पास नहीं आते हैं। पहले युगदानी नामक दूत खड़ा है, दूसरा बज्जरघाती है, तीसरा मृत्यु, चौथा परलंबित और पाँचवाँ स्वयंबर है। ये पाँचों जीव को कष्ट देते हैं। जिस घट में साहिब का नाम होता है, वो हंस भूलता नहीं है, वो इन यमदूतों से तनिक भी डरता नहीं है।

राजा ने कहा कि अब मुझे नाम देकर अपना कर लो। मेरा जीव

नरक में पड़ा हुआ है, मैं बड़ा ही कामी हूँ, कुटिल हूँ, मेरे जीव को तारो।

साहिब ने कहा—

**अजर नाम चौका विस्तारो। जेहिते पुरुषा तरै तुम्हारो॥  
गाँव तुम्हारे ब्राह्मण जाती। धोती कीन्ही बहुतै भाँती॥  
बारी माहिं कपास लगायी। बहुत नेम से काँति बनायी॥  
सो धोती तुम राजा लाऊ। पाछे चौका जुगुति बनाऊ॥**

साहिब ने कहा कि चौका आरती करके नाम लो, जिससे तुम्हारा जीव तरे। तुम्हारे गाँव में एक ब्राह्मणी है, जिसने एक धोती बनाई है, तुम वो धोती ले आओ, फिर चौका करने की विधि करना।

तब राजा ने एक नेगी को साथ लिया और चल पड़ा।

**तब राजा आपै चलि गयऊ। साथ एक नेगी को लयऊ॥  
पूछत ब्राह्मणी राजा गयऊ। वही पुरी में जाइ ठाढ़ रहे ऊ॥  
राजा आवन सुनी जब सोई। आदर देन चली तब ओई॥  
माई पुत्री आगे चलि आई। दधि अछत औ लुटिया लाई॥**

राजा नेगी को साथ लेकर ब्राह्मणी माई का पता पूछते हुए उसके घर जा पहुँचा। जब माई ने राजा के आने की बात सुनी तो आदर देने को चली आई। माई की बेटी राजा के लिए लुटिया में दही डाल कर ले आई।

माई ने कहा—

**ब्राह्मणी कहै दोई कर जोरी। राजा सुनिये विनती मोरी॥  
भाग मोर हम दर्शन पावा। मैं बलिहारी यहाँ सिधावा॥**

कहा कि मेरे बड़ें भाग्य हैं, जो आपने मुझे दर्शन दिये।

राजा ने माई से कहा—

**राजा कह ब्राह्मणी से बाता। तुव घर धोती एक रहाता॥  
सो धोती हमको देहू। गाँव ठौर तुम हमसे लेहू॥**

राजा ने माई से कहा कि तुम्हारे घर में एक धोती है, वो मुझे दे दो, बदले में चाहो तो मुझसे रहने के लिए कोई गाँव लो।

माई ने कहा—

**ब्राह्मणी कहे सुनो हो राऊ। धोती सुधि तुहि कौन बताऊ॥**

माई ने राजा से पूछा कि मेरी धोती के बारे में आपसे किसने बताया?

राजा ने कहा—

**हम घर सतगुरु कहि समझायी। धोती सुधि हम गुरु पै पायी॥**

कहा कि मेरे सद्गुरु ने मुझे धोती की खबर दी है।

यह सुन माई को दुख हुआ, कहा—

**माई तब करइ विनती धोती नाथ अनाथ की॥**

**गाँव मुलक नहिं चाहिं मोहि धोती अहै जगन्नाथ की॥**

**हम दीन हैं अधीन भिक्षुक शीस बरु मम लीजिये॥**

**करि जोड़ि विनती मैं करूँ जस चाहिये अब कीजिये॥**

माई ने कहा कि मुझे आपसे कोई गाँव नहीं चाहिए, मैं आपको यह धोती नहीं दे सकती, क्योंकि मैंने यह धोती जगन्नाथ के लिए बनाई है। मैं आपके अधीन हूँ, चाहे तो मेरा सिर ले लीजिए।

राजा ने वापिस आकर साहिब को सारी बात बता दी।

**साहिब ब्राह्मणी लग हम गयऊ। धोती माँगत हम नहिं पयऊ॥**

**कहे धोती मोहि देइ न जायी। जगन्नाथ हे तु धोती बनायी॥**

**कहे बरु शीस लेहु तुम राजा। धोती देत होय व्रत अकाजा॥**

यह सुन साहिब मुस्काए, कहा—

**एती सुनतै हम विहँसाये। राजा कहँ एक वचन सुनाये॥**

**छरीदार दोउ देउ पठायी। ब्राह्मणी संग क्षेत्रहीं जायी॥**

**यहि प्रतीति लेहु तुम जाका। हम बिन धोती लेइ को ताका॥**



साहिब ने राजा को कहा कि एक चोबदार को वहाँ भेज दो, वो ब्राह्मणी के साथ वहाँ जायेगा। तुम विश्वास रखो कि मेरे बिना उस माई से धोती कोई नहीं ले सकता।

**राजा छड़ीदार पठवाये । ब्राह्मणी संग क्षेत्र चलि जाये ॥**

**नरियर लेइ ब्राह्मणी हाथा । करि अस्नान परसि जगन्नाथा ॥**

**लै धोती जब परस्यो जायी । तब धोती बाहर परि आयी ॥**

राजा ने चोबदार को भेज दिया। वो ब्राह्मणी के साथ वहाँ गया। जब माई नारियल लेकर जगन्नाथ में स्नान करने गयी। जब माई ने धोती को प्रवाहित किया तो धोती बाहर आ गयी।

ब्राह्मणी दुखी हुई, कहा कि अब यह धोती किसी काम की नहीं रही। अब मैं पुनः दूसरी धोती कैसे लाऊँ!

जगन्नाथ ने कहा—

**जाके व्रत तुम काति बनायी । सो घर बैठे माँगि पठायी ॥**

**अब तुम अपने घर लै जाहू । लै धोती दै डालो काहू ॥**

कहा कि जिसके लिए तुमने व्रत रखकर धोती बनाई, उसने ही तो घर बैठकर धोती माँगवाई थी। अब तुम इसे अपने घर ले जाकर किसी को दे दो।

यह सुन माई ने कहा—

**तबै ब्राह्मणी कहै कर जोरी । ठाकुर सुनिये विनती मोरी ॥**

**राय बीरसिंह मो घर आये । धोती माँगि कबीर पठाये ॥**

**उनके माँगे मैं नहिं दीना । हम कहि जगन्नाथ व्रत कीना ॥**

**तब राजा अपने घर गयऊ । हम लै धोती इहाँ सिधयऊ ॥**

माई ने कहा कि राजा बीरसिंह मेरे घर में धोती माँगने आए थे, पर मैंने उन्हें नहीं दी, कहा कि यह धोती मैंने जगन्नाथ के लिए बनाई है। तब राजा अपने घर चले गये और मैं धोती लेकर यहाँ आ गयी।

जगन्नाथ ने कहा—

**जगन्नाथ तब कहि समझायो । तुम अपनी भल भाँति नशायो ॥  
उनके माँगे धोती देती । आपन जनम सुफल कर लेती ॥**

जगन्नाथ ने कहा कि तुमने अपना भलि भाँति नाश कर लिया, यदि तुम उन्हें धोती दे देती तो अपना जन्म सफल कर लेती ।

**जगन्नाथ जस कहि समझायी । छड़ीदार तब लिये अर्थायी ॥  
छड़ीदास अरु ब्राह्मणी आये । जहाँ राय अरु हम बैठाये ॥  
ब्राह्मणी ले धोती धर दीनी । दोय कर जोरि सो विनती कीनी ॥**

जगन्नाथ के समझाने पर चोबदार समझ गया । वो माई के साथ वहाँ आया, जहाँ राजा और साहिब बैठे थे । माई ने धोती लेकर वहाँ रख दी और दोनों हाथ जोड़कर विनती की कि मैं मूर्ख पहले समझ नहीं पाई, आपको धोती नहीं दी ।

राजा ने कहा—

**जब हम माँगी तब न दियऊ । अब कस देन यहाँ चलि अयऊ ॥**

कहा—जब मैंने माँगी थी, तब तो दी नहीं, अब यहाँ क्यों देने चली आई?

तब चोबदार ने सारी बात बतायी ।

**छड़ीदार तब शीस नवाये । राजा से उठि विनती लाये ॥  
जगन्नाथ धोती नहिं लीना । मंडप बाहर धोती कीना ॥  
जगन्नाथ अस वचन सुनावा । यह धोती हम काम न आवा ॥  
जब राजा ने माँग पठाई । कस न धोती दीनेउ माई ॥**

छड़ीदार ने जब सारी बात बता दी तो राजा साहिब ने साहिब के चरणों में सिर नवाया, उनकी स्तुति की, कहा—

**साँचे सतगुरु हैं तुव बचना । सत्य लोक की सत्य है रचना ॥  
अब मोहि धनी सिखापन दीजै । हम पुरुषा आपन करि लीजै ॥  
जाते अजर अमर पद पाई । सोई विधि तुम करो गुसाई ॥**

राजा ने कहा कि आप सत्य हैं, आपकी सब बातें भी सत्य हैं, आपकी सत्यलोक की सृष्टि भी सत्य है। अब मुझे ज्ञान दीजिए, मेरे जीव को अपना कर लीजिए। वही उपाय कीजिए, जिससे मेरा जीव अमर पद को प्राप्त करे।

तब साहिब ने उसे आरती का सामान लाने को कहा। तब आरती करवाकर साहिब ने उसे नाम दिया।

**बीरा पाय राय भय भागा। सत्यज्ञान हृदय में जागा ॥**

**गद्गद कंठ हरष मन बाढ़ा। विनती करै राजा होय ठाढ़ा ॥**

**प्रेमाश्रु दोड़ नयन ढरावै। प्रेम अधिकता वचन न आवै ॥**

नाम पाकर राजा के मन का भय समाप्त हो गया और हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो गया। राजा प्रेम में इतना मग्न हो गया, उसके कंठ से वचन नहीं निकलता था और नयनों से प्रेम के आँसू निकलने लगे।

**राय चरण गहे धाय, चलिये वहि लोक को ॥**

**जहवाँ हंस रहाय, जरा मरण जेहि घर नहीं ॥**

राजा ने साहिब से कहा कि अब उसी लोक को चलो, जो हंस का देश है, जहाँ जन्म मरण नहीं है।

साहिब कहते हैं—

**सत्य द्वीप सत्य है लोका। नहीं शोक जहँ सदा अशोका ॥**

**सत्यनाम जीव जो पावै। सोई जीव तेहि लोक समावै ॥**

**ऐसो नाम सुहे ला भाई। सुनतहिं काल जाल नशि जाई ॥**

**सोई नाम राजा से पाये। सत्य पुरुष दर्शन चित लाये ॥**

.....साहिब कहते हैं कि सत्यलोक में कोई दुख नहीं है। जो जीव सत्यनाम पा जाता है, वो ही उस लोक में पहुँच पाता है। सत्यनाम को सुन काल का जाल समाप्त हो जाता है। वो ही नाम राजा ने पाया और सत्यपुरुष के दर्शन कर उनमें ध्यान को लगाया।

**ऐसो नाम है खसम का, राय सुरति करि लीन ॥**

**हर्षित पहुँचे पुरुष घर, यमहिं चुनौती दीन ॥**



## 5. राजा जगजीवन को चेताया

एक समय धर्मदास जी ने साहिब से पूछा—

धर्मदास कह सुनहूँ स्वामी । कहो गरभ की अंतर्यामी ॥  
कैसे जीव गरभ में आवे । कैसे जीव जठर दुख पावे ॥  
कैसे जीव परवशे भयऊ । कैसे इंद्रि देह बनयऊ ॥  
कैसे जीव अपने पद परसे । कैसे जीव समरथ पद परसे ॥  
कैसे जीव कौल बाँधावे । कैसे साहिब दर्शन पावे ॥  
सो सब भेद कहो गुरु ज्ञानी । घट भीतर का भेद बखानी ॥

कहा कि मुझे गर्भ का भेद बताओ । जीव गर्भ में कैसे आता है ?  
कैसे वो जठर अग्नि का दुख पाता है ? कैसे वहाँ सब इंद्रियाँ बनती हैं ?  
कैसे जीव अपने चरण स्पर्श करता है ? कैसे प्रभु के चरण स्पर्श करता  
है ? कैसे वो प्रतिज्ञा करता है ? कैसे साहिब के दर्शन पाता है ??? हे  
प्रभु ! घट के भीतर का वो सारा भेद मुझे समझाकर कहिये ।

साहिब ने कहा—

कहाँ कबीर सुनो धर्मदासा । घट भीतर का भेद परकासा ॥  
सबही जीव गर्भ में जावें । कौल बाँध कै बाहर धावें ॥  
चूके कौल गरभ का भाई । बारं बार गरभ में जाई ॥  
नौ नाथ सिद्धि चौरासी भारी । उनहूँ देह गरभ में धारी ॥  
नौ अवतार विष्णु जो लीन्हा । उनहूँ गरभ वसेरा कीन्हा ॥  
तैतीस कोटि देव कहाये । गरभ वास महँ देह बनाये ॥  
जोगी जंगम औ तप धारी । गर्भवास में देह सँवारी ॥  
गर्भ वास तब छूटे भाई । जब समरथ गुरु बाहँ गहाई ॥

साहिब ने कहा कि सब जीव गर्भ में आते हैं और प्रतिज्ञा करके  
बाहर आते हैं । जो गर्भ की प्रतिज्ञा नहीं निभाता, उसे बार बार गर्भ में  
आना पड़ता है । नौ नाथ, चौरासी सिद्ध, अवतार, देवता, जोगी जंगम,

तपस्वी आदि सबकी देह गर्भ में बनी। यह गर्भ तभी छूट सकता है, जब समरथ गुरु की शरण में आकर उसे अपनी बाँह पकड़ा दो।

गर्भ की उत्पत्ति के विषय में साहिब कहते हैं—

**नारि पुरुष बाँधे संयोगा । कामबाण लगि देह सुख भोगा ॥  
सप्त धातु का अंग बनाया । जिह्वा दाँत मुख कान उपाया ॥  
हाथ पाँव रु शीश निर्माया । सुंदर रूप बनी बहु काया ॥  
दश द्वार नौ नाड़ी बनायी । ऐसे सब पर बँध लगायी ॥  
दीन्हा ठे क बहत्तर भारी । नाड़ी बँधन बहुत अपारी ॥**

साहिब कह रहे हैं कि नारी पुरुष सब पर काम बान लगा हुआ है, सब देह सुख को भोग रहे हैं। सात धातुओं से शरीर की रचना है। जिह्वा, दाँत, मुख, कान, हाथ, पाँव और शीश का निर्माण किया गया। इस तरह सुंदर काया का निर्माण किया गया। इसमें दस द्वार हैं, नौ नाड़ियाँ हैं। इस प्रकार सबको इस शरीर में बाँधा गया है। फिर अन्य 72 प्रमुख नाड़ियाँ हैं।

**नाद बिन्दु सों काया निरमायी । तामें प्रकृति आन समायी ॥  
हृद कारिगर हुनर कीन्हा । जैसे दूध में जामन दीन्हा ॥  
अजब महल बहु खूब बनाया । छठे महल हंस चितवन लाया ॥  
छठे मास में सुरति आयी । दुख सुख की तब पारख पायी ॥  
छै मास को भयो जब प्राणी । दुख सुख की मति सबै पहिचानी ॥**

रज-वीर्य से काया का निर्माण हुआ। फिर उसमें 25 प्रकृति का वास हुआ। इसकी रचना करने वाले काल रूपी कारीगर ने हृद कर दी। जैसे दूध में जामन देकर उसे जमाया जाता है, ऐसे ही इस काया का निर्माण हुआ। आत्मा को छठे चक्र पर वास मिला। छठे मास में सुरति आयी और तब जीव को सुख-दुख का आभास हुआ।

**औंधे मुख झूले लटकंता । मैल बहुत तहँ कीच रहंता ॥  
जठर अग्नि तहँ बहुत सतावै । संकट गर्भ तहँ अंत न आवै ॥**

बहुत साँकरी पिंजार पाई । तड़ फै बहुत निकसे नहिं जाई ॥  
 मुख सों बोल निकसि नहिं आवै । करुना करि मन में पछितावै ॥  
 अरुझै श्वास रोवै मन माहीं । कौन करमगति लागी आहीं ॥  
 ता दुख की गति कासु कहीजै । करम उनमान तहँ दुख सहीजै ॥  
 यहि आलोच करै मनमाही । संगी मित्र कोई दीखत नाहीं ॥  
 पिछला जनम जब सूझा भाई । तब जिव दिलमा चिंता आई ॥  
 स्त्री मित्र कुटुंब परिवारा । सुत नाती औ सैन पियारा ॥  
 संगी सुजन बंधु औ भाई । गरभ कि चीन्ह परी नहिं ताई ॥

साहिब कहते हैं कि जीव औंधे मुँह गंदगी में लटकता रहता है । फिर वहाँ जठर अग्नि का ताप भी सहन करता है । गर्भ के कष्ट का अंत नहीं है, बहुत कष्ट मिलता है । बहुत ही सँकरे पिंजरे में जीव फँसा होता है, जहाँ वो तड़पता रहता है । उसके मुख से कुछ भी बोल नहीं निकलता है । उस दुख का वर्णन किससे करे, क्योंकि वहाँ कोई संगी मित्र भी नहीं होता है । यदि उसे पिछला जन्म याद आ जाता है, स्त्री, कुटुंब, परिवार आदि को याद कर दुख होता है । वहाँ उसे कोई नहीं दिखता ।

**महा दुख सो गरभ में पावे । बहुत वैराग हिया में आवे ॥**

**जिव अपने दिल माहि विचारे । तब समरथ को कीन पुकारे ॥**

महादुख जीव गर्भ में पाता है । उसके दिल में उस समय बहुत वैराग आ जाता है और साथ में महा दुख भी होता है । इसलिए वहाँ वो प्रतिज्ञा करता है कि अब मैं प्रभु का भजन करूँगा, सद्गुरु की शरण ग्रहण करूँगा । जीव अपने दिल में यह विचार कर प्रभु को पुकारता है ।

राजा जगजीवन की कथा सुनाते हुए साहिब धर्मदास से कहते हैं—

**सुनु धर्मनि यक कथा सुनाऊँ । यक राजा को जस बने बनाऊँ ॥**

**राय जगजीवन ताहिकर नामा । जब वह पहुँच्यो एही ठामा ॥**

**करन विनती लागु अधीरू । सतगुरु कहँ तब कीन्ही टे रू ॥**

साहिब धर्मदास को कहते हैं कि तुम्हें राजा जगजीवन की कथा सुनाता हूँ। जब वो इस दशा को प्राप्त हुआ तो उसने सद्गुरु तो पुकार की, कहा—

**साहिब संकट दूर निवारो । मैं निज खानाजाद तुम्हारो ॥  
अबकी कृपा करो हो स्वामी । कौल करूँ प्रभु अंतरयामी ॥  
बाहर निकारो आदि सनेही । बहु दुख पावै मेरी देही ॥**

राजा जगजीवन ने गर्भ में पुकार की, कहा—हे सद्गुरु! मेरा संकट दूर करो, मैं तुम्हारा दास हूँ। मैं प्रतिज्ञा कर रहा हूँ, अब तो मेरा दुख दूर करो, मुझे बाहर निकालो, मेरी देही बड़ा कष्ट पा रही है।

**मैं जन प्रभु को दास कहाऊँ । और देव के निकट न जाऊँ ॥  
सतगुरु का होय रहों चेरा । दम दम नाम उचारूँ तेरा ॥  
नित उठि गुरु चरणामृत लेऊँ । तन मन धन निछावर देऊँ ॥  
जो मैं तन सों करूँ कमाई । अर्धमाल मैं गुरुहि चढ़ाई ॥  
कुबुद्धि सीख काहू नहिं मानूँ । हराम माल जहर करि जानूँ ॥  
कुल की त्यागूँ मान बड़ाई । निर्मल ज्ञान एक संत सगाई ॥  
दुख सुख परे सो तन से सहूँ । भक्ति दृढ़ै गुरु चरणै रहूँ ॥  
पर त्रिया ताकूँ न कोई । जननी बहन करि देखूँ सोई ॥  
दुष्ट बैन कबहूँ नहिं खोलूँ । शीतल बैन सदा मुख बोलूँ ॥  
सतगुरु कहैं सोई अब करिहौं । आज्ञा लोप पाओं नहिं धरिहौं ॥  
और सकल बैरी कर जानूँ । सतगुरु कहैं मित्र कर मानूँ ॥  
यहि गर्भवास में कौल बधाऊँ । बाहर निकारो धुर निर्बाऊँ ॥**

हे सद्गुरु! बाहर आकर मैं आपका ही दास कहाऊँगा, किसी और देवता के निकट नहीं जाऊँगा। सद्गुरु का दास बनकर रहूँगा, स्वाँस स्वाँस में उनके नाम का जाप करूँगा। रोज़ उठकर गुरु का चरणामृत लूँगा; तन, मन, धन सब उनपर अर्पण कर दूँगा। मैं जो भी कमाई करूँगा, उसका आधा गुरु को भेंट कर दूँगा। किसी की बुरी सीख नहीं

मानूँगा, हराम के माल को ज़हर समान समझूँगा, कुल की मान-बड़ाई को त्यागकर संत के संग में निर्मल ज्ञान प्राप्त करूँगा। रात-दिन भक्ति में लगा रहूँगा। जो भी सुख दुख आयेगा, उसे सहन करते हुए गुरु भक्ति में दृढ़ रहूँगा। पराई स्त्री की तरफ़ बुरी नज़र से नहीं देखूँगा, उन्हें माता और बहन समान समझूँगा। किसी को भी बुरे शब्द नहीं कहूँगा, सदा शीतल बचन ही कहूँगा। जो भी सद्गुरु कहेंगे, वही करूँगा, उनकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करूँगा। अन्य सभी को मैं अपना शत्रु समझूँगा, केवल गुरु को ही अपना सच्चा मित्र मानूँगा। मैं गर्भवास में यह प्रतिज्ञा करता हूँ, मुझे बाहर निकालो, मैं अपनी प्रतिज्ञा को निभाऊँगा।

**अब तो ख़बर परी यहि ठाहीं। और काहू का चालै नाहीं॥  
देवी देव का कछु न चालै। गुरु बिन कौन करै प्रतिपालै॥  
पिछली बात मैं हृदय में जानी। कोई काहू का नहीं रे प्राणी॥  
अपने साथ चलेगा सोई। जो कछु सुकृत करे सो होई॥  
मद माया में जीव भरमाया। सो तो कोई काम न आया॥  
बहुत विचार किया मैं सोई। अंतकाल अपनो नहिं कोई॥  
ऐसी करुणा करै विचारा। दया करो दुख भंजन हारा॥**

राजा आगे कहता है कि यहाँ आकर यह पता चला है कि किसी का कुछ नहीं चल सकता है, बिना गुरु के कोई रक्षा नहीं कर सकता है।

दूसरी बात मैंने यह जानी है कि कोई किसी का नहीं है, कोई साथ में नहीं चलेगा, जो कोई अच्छा कर्म करेंगे, वही साथ जायेगा। मन-माया में जीव भ्रमित रहा, पर यहाँ वो सब काम नहीं आया। मैंने बहुत विचार किया कि कोई भी अपना नहीं है। इसलिए हे प्रभु! दया करो, मेरा दुख दूर करो, बाहर निकालो।

उसकी विनती सुन साहिब ने कहा—

**तब साहिब यों कहै पुकारा। कहि समझाया तोहिं बारं बारा॥  
कई बार तैं कौल बँधाया। कई बार तैं गर्भ में आया॥**



गर्भ में ज्ञान उपजा है तोही। संकट में सुमिरे सब कोही॥  
 बाहर निकसि नहिं उपजै ज्ञाना। अँधकार अहंकार समाना॥  
 बार अनेक भुलाना भाई। नहिं सतगुरु की दीक्षा पाई॥  
 गरभ त्रास तब छूटै भाई। जब सतगुरु कहँ बाँह थमाई॥  
 गरभ वास में कौल बँधावा। सो कैसे तैं न बाहर निर्बावा॥  
 बहु संकट तोहि उपजे ज्ञाना। बाहर निकसत सब विसराना॥  
 जोई जीव कौल निर्वाहै। सोई नहिं गरभ वास महँ आवै॥

साहिब ने कहा कि तुम्हें बार बार समझाता आया हूँ। तू अनेक बार गर्भ में आया है, कई बार तूने प्रतिज्ञा की है। गर्भ में ही ज्ञान हुआ है, संकट के समय तो पुकार करते हैं। जब तू बाहर आया तुझे ज्ञान नहीं हुआ, तेरे अंदर तब अज्ञान समा गया। बार-बार तू भूलता आया है, तूने कभी सद्गुरु से दीक्षा नहीं ली। गर्भ का कष्ट तब छूटेगा, जब तू सद्गुरु को बाँह थमाएगा। गर्भवास में तू प्रतिज्ञा करता है, पर बाहर आकर निभाता क्यों नहीं। जब संकट पड़ता है, तभी ज्ञान होता है, बाहर निकल कर सब भूल जाता है। जो जीव गर्भ की प्रतिज्ञा निभाता है, वो फिर गर्भवास में नहीं आता।

राजा ने कहा-

**अब नाहीं भूलूँ गुरुदेवा। तन मन लाय करूँ गुरु सेवा॥  
 मोकूँ बाहिर काढो स्वामी। कौल न चूकूँ अंतर्दामी॥**

कहा-हे गुरुदेव! अब मैं नहीं भूलूँगा, तन, मन से गुरु की सेवा करूँगा। मुझे बाहर निकालो, मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं भूलूँगा।

साहिब ने तब उसकी प्रतिज्ञा के बोल पर ध्यान दिया और उसे बाहर निकाला।

**कौल बोल सब चौकस कीना। तबहीं गर्भ सों बाहर लीना॥  
 नौवें मास जो बाहर आया। लोग कुटुंब सबही सुख पाया॥  
 सबही हरष करैं मन माई। पुत्र हे तु सब करैं बधाई॥**

नगर लोक सब करैं बधाई । घर घर साजे देइ लुगाई ॥  
 घर राजा के जनम सो पइया । कौल किया सो सब बिसरैया ॥  
 पीसुन मिले सबहिं धुतारा । सबहीं ज्ञान भुलावन हारा ॥  
 ताका नाम सुनो रे भाई । महा जाल के फँद फँदाई ॥  
 झूठे झूठ मिले संसारा । नरक कुण्ड में नाखनहारा ॥

तो साहिब ने राजा को गर्भ से बाहर किया, नौवें महीने में राजा बाहर आया । उसे देख परिवार के लोग बड़ा खुश हुए, सब एक दूसरे को बधाईयाँ देने लगे । बाजे बजने लगे, गीत होने लगे, सारे शहर में बधाईयाँ होने लगी, स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं । गुड़ बाँटे जाने लगे । राजा के घर में जन्म लेकर वो किया हुआ वादा भूल गया । उसके पिता ने कर्मकांडियों को बुलाकर उसे काल के जाल में फँसा दिया । झूठे पाखंडियों ने कर्मकाण्ड करके उसे नरक में धकेल दिया ।

माता, पिता, दादा, दादी, पड़ोसी, पंडित, ज्योतिषी, पुरोहित,  
 आदि सबने अपना अपना राग अलापा ।

माता मन में करै बखाना । यह भल उग्यो आजु को भाना ॥  
 बालक जन्मा मोरे कोखा । जन्म भरे की भागी धोखा ॥  
 पिता के मन में ऐसी आवैं । उमगे हरष हिय नाहिं समावैं ॥  
 बाटे पान मिठाई बहुता । धन्य धन्य मोर जनम्यो पूता ॥  
 काका कहै मैं उतरूँ पारा । बालक खेलै घर के द्वारा ॥  
 कर्म जोर मोरे बड़ कीन्हा । क्षेत्रपाल मोहिं बालक दीन्हा ॥  
 दादा सुनिकै दौरे आये । पोता देख बहुत सुख पाये ॥  
 दासी हाथे कुँवर मँगाया । हेतु प्रीति से कण्ठ लगाया ॥  
 दादी के मन हर्ष अपारा । लेत बलाई बारं बारा ॥  
 मैं करी बहुत सतियन की सेवा । भये प्रसन्न मोर कुलदेवा ॥  
 नानी आवत वेगि उठाया । मुख चुंबा है कण्ठ लगाया ॥

लून ले शिर ऊपर वारा । द्रव्य माल पुनि बहुत उतारा ॥  
 अब नाना मुख देखन आया । दौहित्रा देखि अधिक सुख पाया ॥  
 उमँगे हरष हिये न अमायी । कंचन चूरा दिया बधायी ॥  
 बहुत करै हरष बुआ बाई । दिन दिन अधिकी करै बधाई ॥  
 मुख चुंबा दै कण्ठ लगावे । हिये हर्ष उमँग नहिं मावे ॥  
 मोसी मन बहु हर्ष उठावै । धन्य बहिन को कोख तरावै ॥  
 मुख चूमे अरु कंठ लगावै । अतिशय उमंग हिये नहिं समावै ॥

माता कहने लगी कि मेरी कोख से आज वंश के सूर्य का जन्म हुआ है । पिता कहने लगा कि मेरा तो बहुत भाग्य है । वो मिठाईयाँ बाँटने में लग गया । काका कहने लगा कि मेरे कर्मों के फल से यह बालक मालिक ने मुझे दिया है । दादा ने तो पोते को गले से ही लगा लिया, बड़ें खुश हुए । दादी कहने लगी कि मैंने सतियों की बड़ी सेवा की थी, इसी कारण मेरे कुलदेवता ने प्रसन्न होकर यह बालक दिया है । नानी ने भी बालक को गले से लगा लिया, उसके सिर के ऊपर से नमक, और पैसे वार दिये । नाना भी बालक का मुख देखने आया, उसे सोने का चूड़ा पहना दिया । बुआ ने भी आकर बालक को गले से लगा लिया । मौसी के मन में भी बड़ी प्रसन्नता हुई, कहा कि मेरी बहन की गोद भर गयी ।

इसी तरह फिर आस पड़ोस के लोग आने शुरू हुए ।

बुढ़िया एक जो बोले आयी । तिन यक बात कही समझायी ॥  
 बालक तैल लौन सों लीजै । लौना नाम कहे धरि दीजै ॥  
 दूजी कहै सुनो रे बाई । बालक डारो छीतर माई ॥  
 साँचो टोना यही कहावों । इनको छीतर कहि बतलावो ॥  
 तिया तीसरी बोले सयानी । मैं जान्यों सो काहु न जानी ॥  
 कोदरा बरोबर तौल के लीजै । याकर नाम कोदरसिंह कीजै ॥  
 जेती नारि आयीं तेहि बारा । सबहिन आपन मता उचारा ॥  
 कोई कोहू कोई काहु बतावैं । स्यानप आपन सबहिं जतावैं ॥

एक बुढ़िया ने आकर कहा कि बालक ने तेल और नमक लिया है, इसलिए इसका नाम लौना रख दो। दूसरी कहने लगी कि इसके गले में जूती पहना दो, यही सच्चा टोना है। तीसरी कहने लगी कि जो मैं जानती हूँ, कोई नहीं जानता; बालक के बराबर के तौल का कोदरा लेकर इसका नाम कोदरसिंह रख दो। जो भी आता, अपना अपना मत देता, अपने को ही सबसे सयाना बताता।

इस तरह फिर कहीं सयाने आये तो कहीं पंडित, कहीं फकीर, कहीं पुरोहित।

**बुडवै एक जो सीस धुनावैं। वाके शिर पर भैरों आवैं ॥  
सो कह हमको बैल बधाओ। भैरोंसिंघ कही बतलाओ ॥  
देवी पूजक एक तब आया। देवीसिंह तब नाम बताया ॥  
गाजी मुर्गी कोई चढ़ावै। गाजीदीन तब नाम बतावै ॥  
दर्वेश एक कहै समुझाई। नाम फकीरा कहो रे भाई ॥  
बाँधि गाँठ गले में दीजै। सब पीरों का चारण लीजै ॥  
जोगी एक तहाँ चलि आया। मेरी भभूत का परचा पाया ॥  
कहा हमारा सुनिकै लीजै। याका नाम सदाशिव दीजै ॥  
यंत्र मंत्र यतीकर लाये। करि तावीज गले पहराये ॥  
ब्राह्मण सबही नगर के आये। पत्रा पोथी साथहिं लाये ॥  
पीपल केरे पान मँगाया। लगन साधि के नाम सुनाया ॥  
जगजीवन नाम जनम का सही। याका मरण होय न कबही ॥  
द्रव्य माल दक्षिणा दीना। जनम पत्रिका लिखाय सो लीना ॥  
बहु विधि सो संस्कार कराया। मोह फाँस में पकरि दबाया ॥**

इतने में एक सिर घुमाने वाला सयाना आया, जिसे भैरो की चौकी आती थी। उसने कहा कि एक बैल मुझे दो, मैं भैरोसिंघ को बलि देकर खुश करूँगा। फिर एक देवी का भक्त आया, कहा कि मेरा नाम देवीसिंह है, एक तगड़ी सी मुर्गी माता को चढ़ाओ, बलि दो और इसका नाम

गाजीदीन रख दो। फिर एक दर्वेश आया। उसने कहा कि सब पीरों के चरणों की धूल लेकर इसके गले में गाँठ बाँध दो। योगी ने आकर कहा कि मेरी भभूत इसे दो और मेरा कहना मानकर इसका नाम सदाशिव रख दो। यंत्र-मंत्र करने वाले आये और उसके गले में तावीज़ पहना गये। फिर पंडित लोग आये और पोथी खोलकर लग्न सोधकर नाम धरा, कहा कि इसका नाम जगजीवन होगा, जो कभी न मरेगा। जन्म पत्रिका लिखने के उन्हें पैसे दिये गये। इस तरह बहुत भाँति से उसका संस्कार कराया गया, मोह फाँस में पकड़कर उसे दबा दिया गया।

**गर्भ कौल तो सब विसराना। अमर रहन का जतन बहु ठाना ॥  
एक सो बात गुप्त ना होई। सयाना लोग कहैं सब कोई ॥  
फँदा अनेकन में फँदाई। कौल किया सब गया भुलाई ॥  
झूठे झूठ मिलै सब कोई। इनते काज एको नहिं होई ॥  
पिछली कौल सबै बिसरानी। महा जाल में बँधे प्राणी ॥  
यह सब झूठै पाखण्ड साजू। इनसूँ सरै न एको काजू ॥**

साहिब कहते हैं कि जो उसने गर्भ में वादा किया था, वो तो भूल गया और अमर रहने का यतन किया जाने लगा। अनेक फँदों में उसे फँसा दिया गया। झूठों से झूठे ही मिले। साहिब कहते हैं कि इनसे कोई भी काम बनता नहीं है। पिछला वादा मनुष्य भूल जाता है और महा जाल में फँस जाता है। यह सब पाखंड का सामान है, इनसे कोई भी काम ठीक नहीं हो सकता।

साहिब समझाते हुए कहते हैं—

**देखो दिलै करि ज्ञान विचारा। किहि विधि उतरो भवजल पारा ॥  
रे कुबुद्धि सुख में मत झूलै। पिछला कौल बोल मति भूलै ॥  
इक दिन फेरि परै गा गाढ़ा। मुशुक बाँधि यम करिहैं ठाढ़ा ॥  
तुम मति जानो अमर है काया। यह दीसै सुपने की माया ॥  
यहि चकचौंध भुलो मति कोई। सेंबल फूल जैसा तन होई ॥**

**जैसे नींद में सुपना आवै । जागि परै तब कछू न पावै ॥**

**यह तन ऐसे देखो भाई । झूठे झूठ मिलैं सब आई ॥**

दिल में विचार करके देखो कि किस प्रकार भवसागर के पार उतरा जाए। हे बुद्धिहीन प्राणी! तू सुख में इतना खुश होकर गर्भ में किया हुआ वादा मत भूल। याद रख कि एक दिन यम तेरी मुँछके बाँध कर ले जायेगा। तुम यह मत समझो कि यह काया अमर है, यह तो सपने की तरह है। यह संसार की चकाचौंद देखकर मत भूल, यह सेंबल के फूल वाली बात है, जो कुछ दिन ही रहेगी। जैसे नींद में सपना आता है तो जागने पर कुछ नहीं होता है। इस तरह यह शरीर भी है। यहाँ सब झूठ का मेला है। कुछ भी यहाँ सत्य नहीं है।

**दिना चार चटक दिखलावै । अंतकाल ग्रासन कूँ धावै ॥**

**काल जंजाल सों छूटा चाई । गुरु से प्रीति करो रे भाई ॥**

**सतगुरु ऐसी युक्ति लखावै । जासे जीव परम पद पावै ॥**

काल चार दिन की चमक-दमक दिखाकर फिर अंत में जीव को खा लेता है। अगर काल के जाल से छूटना चाहते हो तो गुरु से प्रेम करो। सद्गुरु ऐसी युक्ति बताते हैं, जिससे जीव परम पद मोक्ष पा जाता है।

पर नहीं, यह जीव सारा जन्म बेकार में गँवा देता है।

**एक वर्ष लगि डोल डोलावै । पशु रूप में जनम गँवावै ॥**

**उखली जीभ तोतला बोलै । मातु पिता सब हर्षित डोलै ॥**

**कंचन घूँघुर बेगि गढ़ाई । रेशम केरी डोर पोवाई ॥**

**परी करै औ ऊभा धावै । बाहर भीतर दौड़ आवै ॥**

**बालक सँग में खेलन जावै । नाच कूद के घरही आवै ॥**

**मन में आनन्द करै चँचलाई । सोच फिकर कछु व्यापे नाई ॥**

**करै कुतूहल मन में सोई । दिन दिन तेज सवाया होई ॥**

**आकुल बोलै सोच न आनै । कूर कपट कर बहु मुख गानै ॥**

संकट का दिन चित्त न आवै । करै अनीति जोई मन भावै ॥  
 चित में दुर्मति रहै अति घनी । महा दुष्ट पापी सनी ॥  
 द्वादश वर्ष की भयी है देही । अनन्त उपाय करै नर केही ॥  
 प्रगट काम काया के भीतर । सोच फिकिर नहिं व्यापे अंतर ॥  
 अंध करै बहुत अहंकारा । निरखै तिरिया घर घर द्वारा ॥  
 गुरु चरचा के निकट न जावै । हँसी मसखरी सों मन भावै ॥  
 झूठी बात करै लबराई । तासों हे तु करै मितराई ॥

एक साल का होता है, तो झूले में झूलता रहता है, पशुओं की तरह जन्म गँवा देता है । फिर धीरे धीरे बोलना शुरू होता है तो उसकी तोतली बोली सुन सब खुश होते हैं । अब उसके पाँव में घुँघरू डाल दिये जाते हैं, इधर उधर भागता फिरता है । थोड़ा बड़ा होता है तो बालकों के संग में खेलने जाता है । फिर दिनों दिन बड़ना शुरू होता है । अब छल कपट भी सीखता है, बड़ा मज्जा आता है, कोई चिंता नहीं होती । कष्ट का दिन भूल जाता है, मन पाप की तरफ मुड़ता है । 12 साल का हो जाता है तो काम भी उत्पन्न हो जाता है, कोई सोच फिकर तो होती नहीं, मन में अहंकार करता फिरता है, घर घर में पराई स्त्री को देखता फिरता है । जहाँ गुरु चरचा होती है, वहाँ तो जाता नहीं, केवल हँसी-मजाक में झूठ बोलने में ही उसे मज्जा आता है ।

ईगुण प्रगटा अंतर माहीं । कामातुर होय करी विवाही ॥  
 पहले विवाही एक लुगाई । बहुत प्रेम संग ताहि लिवाई ॥  
 विषय विवेक फिर उपजा भारी । पीछे व्याही सुंदरी नारी ॥  
 अँगस्वरूप कामिनि अधिकाई । कामातुर सों रहे लपटाई ॥  
 महा अनन्द भये मन माहीं । एक पलक संग छाड़ें नाहीं ॥  
 करै खवासी कहत है दासी । बँधा मोह जाल की फाँसी ॥  
 नव नव खंड के महल बनाये । सेना केरे कलस चढ़ाये ॥

करी बिछावन तहँ बड़ भारी । गादी तकिया बहुत अपारी ॥  
 बहुत मोल को अतर मँगावै । फूलन केरी सेज बिछावै ॥  
 नित नित तिरिया नई संयोगा । खान पान औ षट रस भोगा ॥  
 मता विषय रह कछू न सूझै । भैरों भूत शीतला पूजै ॥  
 भूले कौल गर्भ की बाँधी । अब चकाचौंध आई आँधी ॥  
 सबही जीव कौल करि आवै । बाहर निकसि सब विसरावै ॥

फिर कामातुर होकर विवाह करता है । पहले जब विवाह होता है तो बड़े प्रेम से उसे लाता है । फिर बाद में जब विषय विकार अधिक बढ़ता है तो सुंदर-सी नारी देख दूसरा विवाह करता है, उसी में दिन रात खोया रहता है, उसकी चाकरी करता है, पर उसे दासी कहता है । बड़े बड़े महल बनाता है, बड़े सुख के साधन जुटाता है । जीभ के स्वाद में अँधा हो जाता है । नित्य नयी स्त्री के साथ संबंध जोड़ता है । विषयों में खो जाता है । गर्भ की कौल भूल जाती है, संसार की चकाचौंध में मस्त हो जाता है । यह एक की कहानी नहीं, सब जीव कौल करके आते हैं और बाहर आकर भूल जाते हैं ।

**ऐसे जीव भूल रहे सारे । तब सतगुरु आई पगु धारे ॥**  
**जीव चितावन सतगुरु आये । अलीदास धोबी समझाये ॥**  
**और हंस बहुत चेताये । फिरत फिरत पाटनपुर आये ॥**

तो जब राजा जगजीवन भी ऐसे ही गर्भ में की हुई कौल को भूलकर विषयों में खो गया तो साहिब आए । पहले अलीदास धोबी को समझाया, और भी कई हंसों को समझाया । फिर चलते चलते पाटनपुर आए ।

**साहिब आये पाटनपुर ठाऊँ । जगजीवन राय बसै तेहि गाऊँ ॥**  
**राय न मानै भक्ति विचारा । हँसे भक्त को बारं बारा ॥**  
**भक्त रूप सब शहर निहारा । कोऊ न मानै कहा हमारा ॥**  
**जाइ बाग में आसन कीन्हा । गुप्त रहे काहू नहिं चीन्हा ॥**



साहिब वहाँ पहुँचे, जहाँ राजा जगजीवन रहता था। राजा के मन भक्ति भावना बिलकुल भी नहीं थी; वो भक्तों की हँसी उड़ाया करता था। साहिब ने भक्त रूप धारण कर सारा शहर देखा, सबको समझाने का प्रयास किया, पर कोई नहीं समझा। फिर साहिब राजा के एक बाग में जाकर गुप्त रूप से बैठ गये।

**द्वादश वर्ष भये बाग सुखाने । सुलगे काष्ठ होय पुराने ॥  
चार कोस तेहि बाग लंबाई । तीन कोस की है चकलाई ॥  
तहवाँ हम कौतुक अस कीया । सूखे बाग हरा कर दीया ॥  
विकसे पुहुप जीव सब जागे । सबने हरियर देखा बागे ॥  
माली जाय कै दीन बधाई । जागा भाग तुम्हारा भाई ॥**

वो बाग 12 साल से सूखा था, चार कोस वो लंबा और तीन कोस चौड़ा था। साहिब ने कौतुक किया, उस बाग को हरा कर दिया, भाँति भाँति के फल और मेवे वहाँ लग गये। जब लोगों की नज़र बाग पर पड़ी तो देखकर चकित हुए, जाकर माली को बधाई दी।

**देखा बाग जाय तेह वारा । फल फूलन का अंत न पारा ॥  
हर्षा माली बाहर आया । देखा बाग बहुत सुख पाया ॥  
फूलन छाब भरी दुई चारी । नाना विधि के फूल अपारी ॥  
नाना विधि के मेवा लाया । लै माली दरबारे आया ॥  
माली सब लै धरी रसाला । राजा पूछ करे ततकाला ॥**

माली आया, देखकर बड़ा खुश हुआ; उसने दो-चार टोकरियाँ फल-फूलों की भरीं और राजा के दरबार में चला। जाकर उनके आगे टोकरियाँ खोलकर रख दीं। बड़े प्यारे प्यारे फल-फूल देख राजा भी चकित हुआ, उसने माली से पूछा—

**कौन देश तैं माली आया । फूल अनूप कहाँ से लाया ॥  
कौन बाग के फलन विशेका । कानो सुनी न आँख न देखा ॥**

राजा ने माली से पूछा कि तुम किस देश से आए हो और यह

अनोखे फल-फूल कहाँ से लाए हो ! ऐसे फल तो न कभी सुने और न देखे हैं ।

माली ने कहा—

**नौ लखा बाग हरा होय आया । फल प्रसून सब नये बनाया ॥**

कहा कि आपका नौ लखा बाग, जो सूख चुका था, हरा हो गया है ।

यह सुन राजा बड़ा खुश हुआ, मंत्री से पूछा कि यह कैसे हो सकता है ! तब पंडित बुलाए गये, उनसे पूछा गया कि यह सूखा बाग अचानक हरा कैसे हो गया है !

**लगन सोधि सब ऐसी कही । कोई पुरुष यहाँ आये सही ॥**

पंडितों ने कहा कि कोई सच्चा पुरुष यहाँ आया लगता है ।

यह सुन राजा बाग में गया ।

**हे रे राय बाग के माहीं । बैठे संत यक ध्यान लगाहीं ॥**

**राजा जाय धरा तब पाई । नगर भरे की परजा आई ॥**

**कहे राजा धन मेरो भागा । दर्शन पाय अमर होय लागा ॥**

राजा ने बाग में जाकर देखा तो साहिब ध्यान लगाकर बैठे थे । राजा ने साहिब के चरण पकड़ लिये, कहा कि मेरा बड़ा भाग्य है कि आपने मुझे आज दर्शन दिये । मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं मुक्त हो रहा हूँ ।

तब साहिब ने राजा से कहा—

**तब राजा सों कही पुकारी । सुन राजा एक बात हमारी ॥**

**हम जनि भार चढ़ाओ भाई । काहे को तुम देहु बड़ाई ॥**

**अच्छा बाग विमल हम चीन्हा । तासो आये आसन कीन्हा ॥**

साहिब ने कहा कि मुझे बड़ाई नहीं दो, मैंने तो यहाँ सुंदर बाग देखा और आसन लगा लिया ।

राजा ने फिर शीश नवाया और कहा—

**फिर कै राजा शीस नवाया । द्वादश वर्ष भये बाग सुखाया ॥**

**छाड़ी फल फूलन की आसा । कोई न आवै बाग के पासा ॥**

**तुम समर्थ पग धारे आई । हरा हुआ बाग सब ठाई ।।  
 राजा कहै दया अब कीजै । मोकूँ मुक्तिदान फल दीजै ।।  
 मेरे मस्तक धरहू हाथा । मैं रहूँ सतगुरु तुम्हारे साथ ।।**

राजा ने फिर से साहिब को शीश नवाया और कहा कि यह बाग तो 12 साल से सूखा पड़ा था, कोई यहाँ आता नहीं था, फूल और फल की आशा ही छोड़ दी थी। आपने यहाँ अपने चरण रखे और बाग हरा भरा हो गया। हे प्रभु! मुझे मुक्ति का दान दो। मेरे माथे पर अपना हाथ रखें। मैं आपके साथ रहना चाहता हूँ।

साहिब ने कहा—

**तुमको कौल भुलाना भाई । किया सो कौल गया बिलराई ।।  
 संकट गरभ में बाचा दीन्हा । बाहर निकसि करम बहु कीन्हा ।।  
 किया कौल जब गये भुलाई । तब हम आइ के चरित दिखाई ।।  
 बहु विधि बात कही चेताई । बाहर निकसि बुद्धि पलटाई ।।  
 तुमको तो कुछ सूझत नाहीं । फँदा मोह जाल के माहीं ।।  
 आवै यम दश द्वारे मूँदी । तबहीं बाँधि करे गा कूँदी ।।  
 सोच बूझ देख मन माहीं । इतने में तेरा कौन सहाही ।।  
 पिसुन मिलैं सब वार न पारा । नरक बास में नाखन हारा ।।  
 घर घर हम सब कही पुकारी । कोई न मानै कही हमारी ।।**

कहा कि तुम अपना वादा भूल गये, जो गर्भ में किया था। संकट के समय वहाँ तुम्हारी रक्षा की थी, पर बाहर आकर तुम फिर कर्म काण्ड में उलझ गये। तुम गर्भ का वादा भूल गये, इसलिए मैंने आकर यह खेल दिखाया, बहुत प्रकार से आकर तुम्हें चिताया, पर तुम्हारी बुद्धि पलट गयी थी, तुम्हें वो कुछ भी याद नहीं रहा, तुम मोह माया के जाल में फँस गये। जब यम आकर तुम्हारे दसों द्वार बंद करके तुम्हें बाँध कर ले जायेगा तो सोच, तब तेरा कौन सहायक होगा! हे मूर्ख! गर्भ में मैंने तुम्हें बहुत समझाया था, पर तू सब भूल गया। मैंने घर घर में जाकर समझाया, पर मेरा कहना किसी ने नहीं माना।

राजा ने कहा—

**अब तो साहब होहु सहाई । मोको यम से लेहु छुड़ाई ॥  
सबही करम बखस कै दीजै । डूबत मोहिं उबार के लीजै ॥**

राजा ने साहिब से कहा कि अब तो कृपा करो, मुझे यम से छुड़ा लो। मेरे सब कर्म माफ कर दो, मुझ डूबते हुए को बचा लो।

**सैन करी पालकी मँगाई । लै सतगुरु को माहिं बिठाई ॥  
पाँव उधार काँध धर लीन्हा । तबही महल पयाना कीन्हा ॥  
सतगुरु पग धर महल के माहीं । सब रानिन को राय बुलाहीं ॥  
समरथ दरशन दीन्हा आनी । धन धन भाग्य तुम्हारो रानी ॥  
सतगुरु को पलँग बैठाई । सब मिलि पाँव पखारो आई ॥  
राजा भाखे शीश नवाई । मोको राखो गुरु शरनाई ॥**

तब राजा ने पालकी मँगायी और साहिब को उसपर बिठाया; खुद जूती उतार कर पालकी को कँधे पर उठाया और महल की ओर प्रस्थान किया। साहिब को महल में लाकर सब रानियों को बुलाया, कहा कि प्रभु ने खुद आकर दर्शन दिये हैं, आप सबका बड़ा भाग्य है। साहिब को पलँग पर बिठाकर रानियों से कहा कि गुरु जी के पाँव पखारो। तब राजा ने साहिब को शीश नवाकर कहा कि मुझे अपनी शरण में रख लीजिए।

साहिब ने कहा—

**तब कहे सतगुरु लेहु सँभारी । राजा सुनहु बात हमारी ॥  
कस चले राजा लोक हमारे । मैं नहिं देखूँ लगन तुम्हारे ॥  
जो कोई बूझे भक्ति हमारी । ताको चाहिये लगन सँचारी ॥  
जैसे लगन चकोर की होई । चंद्र सनेह अँगार चुगोई ॥  
ऐसे लगन गुरु से होई । धर्मराय शिर पग धर सोई ॥  
तुम तो हो मोटे महराजा । कैसे छोड़ि हौ कुल मर्यादा ॥**

कैसे छोड़ें हौ मान बड़ाई । कैसे छोड़ि हौ मुख चतुराई ॥  
 कैसे छोड़ि हौ हाथी असवारा । कैसे छोड़ि हौ ग्रंथ भँडारा ॥  
 कैसे छोड़ि हौ काम तरंगा । कैसे राज से करो मन भंगा ॥  
 कैसे छोड़ि हौ कनक जवाहिर । कैसे छोड़ि हौ कुल परिवारा ॥  
 तुम तो उनकी बाँधी आसा । हम तो राजा कथें निरासा ॥  
 जो तुम तजो अंदर की बाथा । तबहीं चलो हमारे साथ ॥  
 भक्ति कठिन करी न जाई । काहे को हिरस करत हो भाई ॥

कहा कि मैं तुम्हें शरण में तो ले लूँ, पर एक बात सुनो, तुम मेरे लोक में कैसे जा पाओगे! तुममें तो लग्न दिखाई नहीं दे रही, प्रेम नहीं दिख रहा, जो कोई हमारी भक्ति पाना चाहता है, उसे चाहिए कि प्रेम उत्पन्न करे। जैसे चकोर की लग्न है। वो अँगार को चाँद समझ मुँह में डालता है, ऐसी ही लग्न, ऐसा ही प्रेम गुरु से होना चाहिए। वो ही जीव काल के सिर पर पाँव रखकर पार हो सकता है। तुम तो अभिमानी राजा हो, तुम कुल की मर्यादा कैसे छोड़ोगे, मान बड़ाई कैसे छोड़ोगे, चालाकी कैसे छोड़ोगे, हाथी की सवारी कैसे छोड़ोगे, पाखण्ड के काम कैसे छोड़ोगे, पोथियों को कैसे छोड़ोगे, काम वासना कैसे छोड़ोगे, मन को कैसे मारोगे, सोना चाँदी कैसे छोड़ोगे, घर-परिवार कैसे छोड़ोगे! तुमने इन सबकी आशा दिल में रखी हुई है, इन्हें कैसे त्याग पाओगे! यदि तुम यह सब त्याग सको तो ही मेरे साथ अमर लोक चल सकते हो। भक्ति करना बड़ा कठिन है, तुम इसका लालच क्यों कर रहे हो।

राजा ने कहा—

राजा कहे दोऊ कर जोरी । सुनिये साहिब विनती मोरी ॥  
 नगर के सब षटबरन बुलाऊ । यहि अवसर सब माल लुटाऊँ ॥  
 नगर कोट की छोड़ी आसा । निश दिन रहूँ तुम्हारे पासा ॥  
 कसनी कसो सों सहूँ शरीरा । तबहूँ प्रीत न छोडूँ तीरा ॥  
 जो तुम कहो सो भक्ति कराऊँ । दया करो तो शीश चढ़ाऊँ ॥

राजा ने दोनों हाथ जोड़कर कहा कि मेरी एक विनती सुनिये। यदि

आप चाहें तो मैं अभी नगर के सभी जाति के लोगों को बुलाकर सारा खजाना दान कर दूँ। मैं सबकी आशा छोड़कर आपके पास ही रहूँगा। यदि आप मेरी परीक्षा भी लेंगे तो शरीर से सब सहन कर लूँगा, पर प्रेम नहीं छोड़ूँगा। आप जैसा कहेंगे, मैं वैसे ही भक्ति करूँगा। आप मुझ पर दया करो, मैं शीश अर्पित करने को तैयार हूँ।

यह सुन साहिब ने कहा—

**तब समरथ अस शब्द उचारा। अब आरति का करो विस्तार।।**

**चार गुरु को चौक पुराओ। तिनका तोराय के जल अरपाओ।।**

**राजा गर्भ निवारों तोरा। भाव भक्ति से करो निहोरा।।**

**भाव भक्ति हम चाहें राजा। धन सम्पत्ति से न कछु काजा।।**

साहिब ने कहा कि अब तुम आरती की तैयारी करो। भाव भक्ति सब काम करो, तुम्हारा बार बार गर्भ में आने का कष्ट मिटा दूँ। मैं तो केवल भाव का भूखा हूँ, धन सम्पत्ति से मुझे कुछ भी लेना देना नहीं है।

राजा ने कहा—

**दया करो सो साज मँगाऊँ। कौन वस्तु ले आगे आऊँ।।**

**साहब कहौ मैं आनूँ सोही। चौका जुगति बताओ मोही।।**

कहा कि कौन सा सामान लाऊँ ? किस तरह से आपकी आरती करूँ ? साहिब ने उसे आरती का सामान बताया। राजा ने सब मँगवाकर आगे रख दिया और विनती की, कहा

**मैं हूँ जीव करम बहु कीना। कैसे यम सों करिहो भीना।।**

**गिनत गिनत नहिं आवे चीना। बारं बार मैं औगुन कीना।।**

**एक बात गुरु कहौ विचारी। मोसम पतित आगे कोइ तारी।।**

राजा ने कहा कि मैंने बहुत गंदे कर्म किये हैं, आप मुझे यम से कैसे छुड़ायेंगे! मैंने बार बार अवगुण किये हैं, यदि गिनूँगा तो याद नहीं आयेंगे। एक बात बताओ कि क्या आपने मेरे जैसे पापी का कभी पहले उद्धार किया है?

साहिब राजा की बात सुनकर हँसे, कहा कि मैं तो युग युग में यहाँ

आता हूँ, जो मेरी बात को समझता है, उसे नाम देकर अपने देश ले जाता हूँ।

**युगन युगन भवसागर आऊँ । जो समझे तेहि लोक पठाऊँ ॥  
शब्द हमारा मानै कोई । तौ नहिं जाय यमपुरी सोई ॥  
इतनी बात कही समझायी । दिल राजा के प्रतीति समायी ॥**

यह सुन राजा को विश्वास हो गया, कहा—

**धन्य भाग मेरा कुल कर्मा । कोटिन यज्ञ कियो तप धर्मा ॥  
सत्यगुरु आय दरस मोहि दीन्हा । बूढ़त हंस उबार कै लीन्हा ॥  
कहु सँदेश नगर में भाई । जग जीवन राय लोक को जाई ॥  
नेगी जोगी सबहिं बुलायी । और नगर की परजा आई ॥  
सब रानी को बेगि बुलायी । करि दण्डवत् गुरु चरणा आयी ॥**

कहा कि करोड़ों यज्ञ, तप का फल मुझे आज मिला, मैं धन्य हो गया, जो सद्गुरु ने आकर मुझे दर्शन दिये, मुझ डूबते हुए को बचा लिया। राजा ने कहा कि सारे नगर में सँदेश दे दो कि राजा अब अमर लोक में जा रहा है। सब योगी, नेगी आए। राजा ने सब रानियों को भी बुलाया, कहा कि गुरु चरणों में आकर दण्डवत् करो। राजा ने सब राजकुमारों को भी बुलवाया।

जब सभी आ गये तो साहिब ने सबको ज्ञान दिया। साहिब ने राजा से कहा—

**तुमरी राय भली बनि आही । तुम गरभवास की कौल निबाही ॥  
जोई कौल गरभ का पालै । ताको सतगुरु होहिं दयालै ॥  
गरभ कौल कोई चूके भाई । असंख्य जन्म चौरासी जाई ॥**

साहिब ने कहा कि तुमने अपनी कौल पूरी की है। जो भी अपनी कौल पूरी करता है, सद्गुरु उस पर दयाल होते हैं। जो गर्भ में किया हुआ वादा भूल जाता है, उसे असंख्य जन्म तक चौरासी में घूमना पड़ता है।

राजा ने साहिब से पूछा—

**राजा कहै दोऊ कर जोरी । सुनु समरथ यह विनती मोरी ॥**

**महाकुकर्मी जो होय प्रानी । करमन से कैसे होय छुडानी ॥**

कहा कि जो महापापी मनुष्य हैं, वो कैसे छूट सकते हैं?

साहिब ने कहा—

**तब समरथ गुरु शब्द उचारा । करमन काटि करूँ निरवारा ॥**

**असंख्य जन्म कर्म किये आयी । पान पान में करम कटायी ॥**

**लगन जैमुनि आवै हाथा । धर्मराय तेहि नावै माथा ॥**

**बिना पान नहिं कर्म कटाई । कोटिन ज्ञान करै जो भाई ॥**

कहा कि मैं जब नाम देता हूँ तो असंख्य जन्मों के कर्म काट देता हूँ। जब कोई जीव जैमुनि लगन लगाता है, तो धर्मराज भी उसे रोक नहीं सकता, उसे माथ नवा देता है। बिना नाम के चाहे कितना भी ज्ञान अर्जित कर ले, कर्म नहीं कट सकते।

राजा ने कहा—

**लगन जैमुनि कैसे पावै । कैसे सतगुरु सों लौ लावै ॥**

**कौन जुगति चरनामृत लेही । कैसे करै जो बनै विदेही ॥**

**लोक लोक गुरु कहो समझायी । कहौ हंस कहै जाय समायी ॥**

**कैसे पावै लोक निवासा । कौन कौन घर करिहै वासा ॥**

कहा कि मुझे बताओ कि यह जैमुनि लगन क्या होती है, कैसे सद्गुरु से लौ लगानी है, कैसे गुरुचरणामृत लेना है, कैसे विदेही बनना है? कहा कि मुझे वहाँ के सब लोकों के बारे में बताओ। हंस किस लोक में जाकर रहता है, कैसे वो उस लोक में जाता है?

साहिब ने कहा—

**तब सतगुरु अस उचारा । शिष्य होय सौंपूँ भंडारा ॥**

**शिष्य होय गुरु वश कर लीजै । तन मन धन सब दे दीजै ॥**

**तन मन धन को नेह न आवै । तब जिव लगन जैमुनि पावै ॥**

कहा कि जो जीव सद्गुरु का शिष्य होकर सब कुछ सौंप देता है, शिष्य होकर तन, मन, धन सब अर्पिक करके सेवक को वश में कर लेता है, तन, मन, धन से प्रेम नहीं रखता, वो जैमुनि लगन पाता है।



तब रानियों ने साहिब से कहा—

**तन मन से करिहैं गुरु सेवा । हमको शिष्य करहु गुरु देवा ॥**

**अंतर बात सब देहु बनायी । जैसे सीप मोती कूँ भायी ॥**

कहा कि अब हमें शिष्य कर लो, हम आपकी तन, मन से सेवा करेंगी। जैसे स्वाती की बूँद से सीपी में मोती बन जाता है, ऐसे ही नाम देकर हमारे अंदर ज्ञान कर दो, प्रभु को प्रगट कर दो।

साहिब ने कहा—

**करनी कठिन सत्य करि जानो । कहनि करनि बहु भेद बखानो ॥**

**कठिन करनी टले जो भाई । ताकर जीव बहुत दुख पाई ॥**

**शिष्य होय जब कौल बँधावे । तन मन धन सब आनि चढ़ावे ॥**

**कियो कौल निबाहे पूरा । करे गुरु सेवा शिष्य सोइ सूरा ॥**

**पूरा होय के शूर कहावै । सतगुरु वचन सदा लौ लावै ॥**

**करी कौल निर्बाहे नहीं । ऐसो शिष्य सो यम मुख जाहीं ॥**

**होय दुखी दुख देह समावै । ताकी देह रोग है आवै ॥**

**गुरु को दोष देहु जन कोई । आज्ञा मेटे सज्ञा तेहि होई ॥**

**सो जिव कदी न उतरे पारा । करन द्वेष जो गुरु से धारा ॥**

**तन मन चढ़ावे वही सुख पावे । आखिर धन यौवन बहि जावे ॥**

**सहज भक्ति राजा तुम करहु । शिष्य होइ भक्ति पद तरहु ॥**

**सहज भक्ति सबही सुखदाई । कठिन कमाई दुस्तर भाई ॥**

**कठिन कमाई खाँडे की धारा । सहज भक्ति से उतरो पारा ॥**

साहिब ने कहा कि कहने और करने में बहुत अंतर होता है, करना बड़ा मुश्किल होता है। कठिन करनी से जो पीछे हट जाए तो फिर वो जीव बड़ा दुख पाता है। शिष्य होकर जब वादा करता है, तन, मन, धन सब चढ़ा देता है, वादा करके फिर उसे निभाता है, गुरु की सेवा करता है, वो शिष्य ही सच्चा शूरवीर है। पूरा गुरु ही शूरवीर कहलाता है, जो सद्गुरु के बचनों को निभाता है। जो वादा करके नहीं निभाता, वो काल के मुख में ही जाता है। जो तन, मन, धन अर्पित कर देता है, वही सुख पाता है। जो किया हुआ वादा तोड़ देता है, वो फिर बहुत संकट पाता है। उसे रोग भी आ घेरते हैं। जो शिष्य गुरु को दोष देता है, उनकी

आज्ञा का उल्लंघन करता है, उसको सज़ा मिलती है, वो कभी पार नहीं हो पाता। हे राजा ! तुम सहज भक्ति करो, सहज भक्ति ही सुखदायी है, कमाई करना बड़ा कठिन है। कमाई करना तो तलवार की धार पर चलना है, पर सहज भक्ति से ही जीव पार हो सकता है, अपनी कमाई से नहीं।

राजा ने कहा—

**सब कर्म कठिन सहज कर जानू। तन मन धन कर लोभ न आनू ॥  
हमको सीख अब देउ गुसाई। कौल करूँ सो चूकूँ नाई ॥  
जो कहूँ चूक कौल हम जावें। अपनी करनी हम भरि पावें ॥  
रंक के हाथ रतन जो आवे। कौड़ी बदले काह गँवावे ॥  
अब सतगुरु दाया मोहि कीजै। चूके कौल का फलहि कहीजै ॥  
फिर कैसे सो सुख पावे। कैसे वह फिर कौल में आवे ॥  
कैसे निर्धन धनै बहोरे। कैसे रोगी रोग सो छोरे ॥  
अब करु शिष्य शब्द मुहि दीजै। नहिं तो देह त्याग हम कीजै ॥**

कहा कि सब कठिन कर्मों को आसान समझूँगा, तन, मन, धन लोभ त्याग दूँगा। मुझे अब सीख दो कि मैं गर्भ का वादा कभी न भूलूँ। यदि मैं गर्भ की कौल भूल जाऊँ तो अपनी करनी का फल भी पाऊँ। रंक के हाथ रतन आ जाए तो फिर वो कौड़ी के बदले में उसे कैसे गँवा सकता है! अब सद्गुरु मुझ पर दया करो और वादा भूलने का फल कहिए, बताइए कि फिर वो नर कैसे सुख पा सकता है, फिर वो दुबारा कौल में कैसे आता है, वो निर्धन से अमीर कैसे होता है, रोगी से निरोगी कैसे होता है? अब मुझे अपना शिष्य करके नाम दो अन्यथा मैं अपना शरीर त्याग दूँगा।

तब साहिब ने कहा कि ऐसा मत करो, आरती का सामान लाओ और नाम पाकर परम सुख को प्राप्त करो।



## 6. अमरसिंह को चिताया

सिंहलद्वीप के अमरपुर में अमरसिंह नामक राजा रहता था। परम-पुरुष की इच्छा से साहिब उसे चेताने संसार में आए। धर्मदास को राजा की सारी कथा सुनाते हुए साहिब कह रहे हैं—

**अमरपुर एक नगर रहाई। सिंहलद्वीप के माहिं बसाई ॥  
अमरसिंह राय को नामा। लागी कचहरी बहु विधि धामा ॥  
तहाँ आकर हम कीन्ह पसारा। पहुँचे राय के महल मँझारा ॥  
षोडश रवि की ज्योति पसारा। महलन माहिं भयो उजियारा ॥  
देख प्रकाश उठे तब राई। धाये पहुँचे महलन में आई ॥  
आये महल में सद्गुरु पासा। सतगुरु चरण गहे विश्वासा ॥**

साहिब जब उसके महल में पहुँचे तो महल 16 सूर्यों के प्रकाश से जगमगा उठा। उस समय राजा का दरबार लगा हुआ था। महल को इतना प्रकाशमय देख राजा दौड़ता हुआ महल में आया। वहाँ साहिब को देख राजा ने उनके चरण पकड़ लिए और बोला—

**अरे साधु एक विनती करिहों। पूछत बचन क्रोध जनि धरिहों ॥  
कै तुम तीन देवन में कोई। कै परब्रह्म तुम आये सोई ॥**

आश्चर्य चकित होकर राजा ने पूछा कि क्या आप त्रिदेव में से कोई हैं या फिर स्वयं परमात्मा हैं।

साहिब ने कहा—

**मैं आया सतलोक से, जीवन करन उबार।  
काल फाँस निवार के, ले जाऊँ लोक मँझार ॥**

कहा कि मैं सतलोक से आया हूँ, जीवों को काल से छुड़ाकर वहाँ ले जाने के लिए आया हूँ।

**इतना कहि गुप्त भये प्रभुराई। राव परे धरनी मुरझाई ॥  
भये विकल मुख आवे न बानी। तलफत मीन जैसे बिन पानी ॥**

इतना कह साहिब गुप्त हो गये और राजा मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़े। जैसे पानी के बिना मछली तड़पती है, वैसे ही राजा भी तड़पने लगे। फिर राजा ने प्रण किया कि जब तक साहिब दर्शन नहीं देते, तब तक जलपान ग्रहण नहीं करेंगे।

पाँच दिन ऐसे ही बीत गये। राजा के दिल में जब बिरह अधिक हुआ तो साहिब वहाँ आए। राजा दौड़कर आए और साहिब के चरणों में गिर पड़ें, कहा कि आज आपने मुझे सनाथ निहाल कर दिया। साहिब ने उन्हें अपने हाथों से उठाया और कहा कि अब मैं तुम्हें काल के जाल से बचा लूँगा। राजा ने कहा कि अब आप मुझे छोड़कर कहीं गये तो मैं अपने प्राण दे दूँगा।

**अबके साहब जाहु दुराई। हमकुँ नाहिं जीवत पाई॥**

साहिब ने कहा—

**कहैं साहिब सुनो हो राई। प्रेम भक्ति बस कतहुँ न जाई॥**

कहा—मैं प्रेम के बस में रहता हूँ, कहीं दूर नहीं जाता।

राजा ने साहिब को फिर महल के भीतर से जाकर पलंग पर बिठाया और रानी को बुलाकर उनके चरण धोकर चरणामृत लिया। फिर साहिब ने राजा के कान में शब्द सुनाया और उसे लेकर चले।

**जाय पहुँचे सुमेर पहारा। वैकुण्ठ लोक रच्यो जेहि ठारा॥**

**तहाँ ते हम चले रिगाई। पहुँचे चित्रगुप्त के ठाई॥**

**लग्यो दरबार चित्र को जहँवा। पाप पुण्य को निबेरो तहँवा॥**

**देखि साहेब को ठाडे भयऊ। डारि सिंहासन बैठक दियऊ॥**

**आये गुप्त साहेब के पासा। विनती करत बहु भये उदासा॥**

**हे साहिब हम पूछत तुमसे। किम लाये यह भूपन हमपै॥**

**यह तो हमरो चोर कहाई। अधम पापि राजा यह आई॥**

**तब साहेब गुप्त से कहे ऊ। लीखनी तुमारी देहिं चुकोई॥**

साहिब उसे लेकर पहले बैकुण्ठ धाम गये, फिर वहाँ से चित्रगुप्त के पास आए। चित्रगुप्त का दरबार लगा था, जहाँ पाप पुण्य का हिसाब रखा जाता है। साहिब को देख चित्रगुप्त खड़े हो गये, उन्हें बैठने के लिए सिंहासन दिया और कहा कि इस राजा को यहाँ क्यों लाए हैं, यह तो हमारे चोर हैं, महापापी जीव हैं।

साहिब ने गुप्त से कहा—

तब साहिब एक जुगति बनाई। पारसपथरी तहाँ दिखाई॥  
 अनेक कर्म से लोहा भरिया। पारस भेटत कंचन करिया॥  
 साहिब गुप्त से कहे समुझाई। इनकू लोहा करो रे भाई॥  
 इतनी सुनि यम भये अधीना। फेर न तिनसे बोलन कीना॥  
 लोहा से जो कंचन कियेऊ। यहि विधि हंसा निरमल भयऊ॥  
 तब यमराज हुकुम करि दीयऊ। दूत दोय राय संग गयऊ॥  
 राजा कू ले जाओ भाई। इनकू यमपुरी लाओ दिखाई॥  
 दूत राय को चले लिवाई। पहुँचे जाय यमपुरी माहिं॥  
 त्रास जीव को देत हैं जहँवा। देखत राजा मन पछितावा॥

साहिब ने तब एक युक्ति रची, उन्हें पारस पत्थर दिखाया, उसमें लोहा भर दिया। पारस का स्पर्श देकर उस लोहे को सोना कर दिया और गुप्त से कहा कि अब इस लोहे को सोना बना दो। यह सुन गुप्त चुप हो गया। तब साहिब ने उसे कहा कि जिस तरह मैंने लोहे को कंचन कर दिया, जो दुबारा लोहा नहीं हो सकता, ऐसे ही मैंने राजा को कौवे से हंस कर दिया है। यह सुन यमराज अधीन हुआ, दूतों को कहा कि राजा को यमपुरी दिखा लाओ। राजा को लेकर दूत यमपुरी में वहाँ गये, जहाँ जीवों को अनेक कष्ट दिये जा रहे थे। राजा यह देख मन में दुखी हुआ।

एक को कोल्हू माहीं पिराई। ऊँधे मस्तक एक झुलाई॥  
 एक को बाँध खंभ सू ताते। चीसे देत बहुत ही भाँते॥

**एक जीव को खात चबाई । भागत फिरे बचत नहीं भाई ॥**

**एक जीव को कुण्ड महिं डारा । मोगरी शिरपै मारे अपारा ॥**

एक को वहाँ कोल्हू में पिराया जा रहा था, एक को उलटा लटकाया हुआ था, एक को खंभे से बाँधकर कष्ट दिया जा रहा था, एक को खाया जा रहा था, वो भागने को कोशिश कर रहा था, पर भाग नहीं पा रहा था । एक को कुण्ड में डाल कर ऊपर से डण्डे मारे जा रहे थे ।

**कुण्ड अनेक बने तहाँ भाई । भांति भांति के त्रास दिखाई ॥**

**ऐसे त्रास जीवन को दियऊ । देखत राजा व्याकुल भयऊ ॥**

**एक कुण्ड तो रुधिर भराई । दूजा कुण्ड तो पीब कहाई ॥**

**त्रीजो कुण्ड मूत्र भराई । योजन एक ताकी गहराई ॥**

**योजन चार की है चकराई । योजन चार लगि गँध उड़ाई ॥**

**परे जीव ता माहिं अपारा । चौथा कुण्ड नरक की धारा ॥**

**पाँचवें कुण्ड सो अग्नि कहाई । बहुत जीव तहाँ जरहीं भाई ॥**

**करत पुकार तहाँ जीव अपारा । यहि अवसर कोउ हमहिं उबारा ॥**

अनेक कुण्ड बने थे । एक में खून भरा हुआ था, एक में पाक भरी थी, एक में मूत्र भरा था । एक-एक योजन गहरे थे, चार योजन चौड़े थे और चार योजन तक उसकी बदबू जा रही थी । उन्में अनेक जीव पड़ें हुए थे । ऐसे ही फिर चौथे में मल, पाँचवें में आग थी, जिसमें कई जीव जल रहे थे । सब जीव बचाओ-बचाओ की पुकार कर रहे थे ।

साहिब धर्मदास से कहते हैं—

**धर्मराय अस खेल बनाया । पाप पुण्य दोउ कीन उपाया ॥**

**पाप पुण्य रचि जीव फँसाया । जो जस करै सो तस फल पाया ॥**

**करै पाप तेहि नरक भुगतावैं । करै पुण्य तेहि स्वर्ग पठावैं ॥**

**कर्महिं भुगति गर्भ में जावै । यहि विधि काल जीव फँदावै ॥**

निरंजन ने पाप पुण्य का खेल रचकर जीवों को अपने जाल में फँसा लिया है। जो जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है। जो पाप करता है, उसे नरक मिलता है, जो पुण्य कर्म करता है, उसे स्वर्ग मिलता है। कर्म का फल भोगकर जीव पुनः गर्भ में आता है। इसी तरह काल जीव को फँसाता है।

**झूठ बचन कहत है जोई। जीभ्या काटि लेत पुनि सोई॥  
झूठी साख भरे जो भाई। विषधर ताके जीभ लगाई॥  
बिन अपराध मारे जो कोई। बहुत मार तेहि ऊपर होई॥  
स्वपुरुष तजि पर पुरुष संग जावे। अग्नि पुरुष तेहि संग मिलावे॥  
पुरुष होय नारी कहँ त्यागे। नारी और सो मन जो लागे॥  
अग्नि नारी तेहि संग मिलावें। यहि विधि जीवन त्रास दिखावें॥  
एक एक को त्रास दिखावें। हाथ छूरी ले कंठ चलावें॥  
एक जीव को ठाडे कीना। काग गीध को हुकुम करि दीना॥  
काग गीध नोचत हैं भाई। भागत फिरे त्रास अधिकाई॥  
जे नर नारी मदिरा पीवें। तप्त तेल पुनि ताहि पिलावें॥  
संत साधु की निंदा करई। अंग अंग माहिं कुष्ठ भरोई॥**

जो कोई झूठ बोलने वाला है, उसकी जीभ काट ली जाती है। जो झूठी गवाही देता है, उसकी जीभ को जहरीले साँप लगा दिए जाते हैं। जो किसी को बिना किसी अपराध के मारता है, उसे वहाँ बहुत मार पड़ती है। जो स्त्री अपने पति को त्याग कर दूसरे पति के साथ मेल रखती है, उसे आग से बने पुरुष के साथ मिलाया जाता है। इसी तरह जो पराई नारी की तरफ जाता है, उसे आग की स्त्री के साथ मिलाया जाता है। इसी तरह जीवों को कष्ट दिए जाते हैं। एक एक जीव को वहाँ कष्ट दिया जाता है, छूरी लेकर उनके गले पर चलायी जाती है। एक जीव को खड़े कर उसपर चीलों को छोड़ दिया जाता है। चीलें उसे नोचती हैं, वो डर के मारे भागता फिरता है। फिर जो नर-नारी शराब

पीते हैं, उन्हें गर्म तेल पिलाया जाता है। जो साधु पुरुष की निंदा करते हैं, उनके सब अंगों में कोड़ हो जाता है।

**जो तिय मारै गर्भ गिरावै । तेल यंत्र तन तासु पिरावै ॥**  
**बाल बृद्ध के हरै जो प्राणा । तप्त तेल महँ पचत अयाना ॥**  
**जे नर हरत दीन के प्रानन । मित्रहि मारत दाहत कानन ॥**  
**तिनहिं अँगारन माँझ सुतावैं । यमगण दारुण त्रास दिखावैं ॥**  
**तेल चुराय जो जग महँ लेते । यमगण तेहि बहुत दुख देते ॥**  
**तेल चोर कहँ तेल कराही । घृत चोरहिं घृत माँझ गिराहीं ॥**  
**जे पर दूध मधु दधि हरहीं । ते गण रक्त कुण्ड महँ परहीं ॥**  
**ऐसी यमपुरी देख बनाई । देखत राजा मन पछताई ॥**

इसी तरह जो नारी गर्भपात कराती है, उसे तेल निकालने वाले यंत्र में से पिरोया जाता है। जो बच्चे और बूढ़ों को मारता है, उसे गर्म तेल में डाला जाता है। जो दीन को या मित्र को मारता है, जंगल में आग लगाता है, उसे अँगारों पर सुलाया जाता है। जो कोई किसी का तेल चुराता है, उसे गर्म तेल की कड़ाही में डाला जाता है, जो किसी का घी चुराता है, उसे घी की कड़ाही में डाला जाता है, जो किसी का दूध, शहद या दही चुराता है, उसे खून की कड़ाही में डाला जाता है। ऐसी भयानक यमपुरी को देख राजा मन में बहुत पछताता है।

**नृप अरु दूत पहुँचे तहवाँ । चित्रगुप्त को दरबार रहै जहवाँ ॥**  
**जहाँ बिराजे ज्ञानी सिंहासन । गहे चरण तहाँ नृपति ततक्षण ॥**  
**यह यम देश कठिन बहुताई । अबकी साहिब लेहु बचाई ॥**

यमपुरी देखने के बाद राजा और दूत वहाँ पहुँचे, जहाँ चित्रगुप्त का दरबार था, जहाँ साहिब भी विराजमान थे। राजा दौड़कर साहिब के चरणों में गिर पड़े, कहने लगे कि यह काल का देश तो बड़ा ही कठिन है, मुझे यहाँ से बचा लो।



साहिब ने राजा से कहा कि जिसके पास नाम होता है, उसे कोई भय नहीं है। फिर साहिब राजा को घुमाकर फिर उसे वापिस उसके शरीर में लाए। राजा ने कहा कि मुझे इस संसार से तारो। तब साहिब ने कहा कि आरती का सामान लाओ। इस तरह फिर साहिब ने राजा को नाम देकर कृतार्थ किया। फिर राजा ने रानी को भी साहिब से नाम दिलाया। फिर राजा रानी ने सारी प्रजा को भी अपनी शरण में लेने की विनती की। साहिब ने सबको नाम देकर कृतार्थ किया।

साहिब धर्मदास को समझाते हुए कहते हैं—

**कहा जीव करनी करै, कहा चलेगा चाल।**

**सतगुरु नाम प्रताप ते, कबहुँ न खावे काल॥**

**कहन सुनन की है नहीं, देखा देखी नाय।**

**सार शब्द जो चीन्ही, सोई मिलेगा आय॥**



**सात शुन्य सातहि कमल, सात सुर्त स्थान।  
इक्कीस ब्रह्माण्ड लग, काल निरंजन ज्ञान॥**

## 7. राजा भोपाल को चिताया

परम पुरुष की इच्छा से एक बार साहिब जलंधर देश में राजा भोपाल को चिताने को आए।

देश जलंधर राय भोपाला। गयऊ तहाँ जिन्दा के हाला।।  
जाई पौरि में ठाढ रहायी। कह्यो पौरिया बहुत चितायी।।  
राजहिं लाउ हमारे पासा। दर्शन करै कर्म नृप नासा।।  
लागै कुंजी कुलुफ किवारा। बहुत लोग बैठे शठिहारा।।  
कोई कहै न्याय जिंद चाहै। कोई कहै बटपार यह आहै।।  
कोई कहै मारि यहि खेदो। निर्गुण भेद तिन्है नहिं भेदो।।  
चारि पहर तब रैन बितावा। भयो भिनसार भोर हो आवा।।  
तब हम चरित दिखावन लागे। फूटि कपाट भये दोई भागे।।  
सबै कँगूरा भुइ खसि परे ऊ। ज्ञानी चली राय पहुँ गयऊ।।

साहिब वहाँ जिंदा के वेश में गये, जाकर द्वार पर खड़े हो गये और द्वारपाल से कहा कि राजा को मेरे पास बुला लाओ ताकि दर्शन करके उसके पाप नष्ट हो सकें। द्वार बंद था, ताला लगा था, राजा के बहुत से दूत बैठे थे, कोई कहता था कि यह राजा से न्याय माँगने आया है, कोई कहता था कि यह लुटेरा है, कोई कहता था कि इसे मारकर यहाँ से भगा दो। तब साहिब ने चार पहर वहाँ बिताए और जब सुबह हुई तो अपना खेल दिखाया, द्वार टूट गया और गुंबद भूमि पर गिर पड़ा, द्वारपाल भाग गये और साहिब आराम से राजा के पास चले।

इतने में द्वारपाल भागते हुए राजा के पास पहुँचे और सारा किस्सा सुनाया, कहा कि यह तो कोई चोर, लुटेरा लगता है। इतने में साहिब ने एक लीला की—

तत्क्षण हम अस लीला कीन्हा। रायमहल सोने करि दीन्हा।।  
कंचन कपाट रतन की पांती। विपरीत बने खंभ बहु भांति।।  
बने कँगूरा रतन रसाला। चकित राजा भये भोपाला।।

साहिब ने कौतुक करके महल को सोने का बना दिया, जिसे देख राजा हैरान हो गये, पूछा—कौन हैं आप? उत्तर में साहिब ने कहा—

**सत्य पुरुष के हम शठिहारा । जीवन काज आये संसारा ॥**

**पुरुष लोक सत्य परवाना । ताका मरम कोई नहिं जाना ॥**

कहा कि मैं सत्य पुरुष का दूत हूँ, जीवों को चिताने संसार में आया हूँ, सत्य नाम का परवाना लाया हूँ, जिसका भेद कोई नहीं जानता है ।

तब साहिब ने राजा को समझाते हुए कहा—

**अलख निरंजन छाड़ो देवा । भ्रम तजि करु सतगुरु की सेवा ॥**

**आवागमण रहित होय जाय । जो प्राणी सत्यगुरु कहँ पाय ॥**

**पुरुष आवाज जाव उबराई । ताते दर्शन दीन्ह तोहि भाई ॥**

कहा कि निरंजन की भक्ति छोड़ दो और भ्रम को त्याग कर सद्गुरु की सेवा करो । जो कोई सद्गुरु की सेवा करता है, वो आवागमण रहित हो जाता है । परम पुरुष की आज्ञा से ही मैंने यहाँ आकर तुम्हें दर्शन दिए हैं ।

**तब राजा बंदे दोउ पाई । कर गहि महलन लैं जाई ॥**

**धन्य भाग मोहि दर्शन दीना । अधम जीव आपन करि लीना ॥**

**कुटिल कठोर अधम अघ पापी । दर्शन दीन छुटै त्रयतापी ॥**

**महामोह तम पुंज अपारा । बचन तुम्हार कीन्ह रविधारा ॥**

राजा ने साहिब के चरण पकड़ लिए और महल के अंदर ले गया, कहा कि मैं तो पापी, नीच जीव हूँ, पर आपके दर्शन से मेरे सारे कष्ट दूर हो गये हैं । मेरे अंदर तो मोह का अंधकार छाया हुआ था, पर आपने कृपा करके अपने बचनों के भीतर में उजाला कर दिया है ।

तब राजा ने रानी को भी साहिब की शरण ग्रहण करने को कहा, कहा कि ये मुक्ति दाता हैं, ईश्वर रूप हैं ।

**राजा आज्ञा रानी मानी । साहिब चरण पखारे आनी ॥**

**कीन्ह दण्डवत पलपल रानी । साहिब दरस दीन्ह भल आनी ॥**

**और पुरुष जानो नहिं नीका । तुम सतपुरुष आहु यहि जीका ॥**

**आये पुरुष हमारे पासा । हमरे मनकी पूजी आसा ॥**

राजा की आज्ञा मानकर रानी ने साहिब के चरण पखारे, दंडवत किया, कहा कि हमारे लिए आप ही सत्यपुरुष हैं, आपने हमें दर्शन देकर हमारे मन की अभिलाषा पूरी कर दी है। यह सुन साहिब ने कहा—

**सुन राय रानी निज बचना । यह तो जाल काल की रचना ॥**

**मेटहु काम क्रोध हंकारा । माया मोह तजौ संसारा ॥**

**तजि संसार शब्द कहँ ध्याओ । गुरुगम पुरुष नाम चितलाओ ॥**

साहिब ने राजा और रानी को कहा कि यह संसार का जाल तो काल की रचना है, तुम काम, क्रोध, मोह, अहंकार, माया आदि के संसार को त्यागकर सद्गुरु के शब्द का ध्यान करो, सत्यनाम को हृदय में धारण करो। यह सुन राजा ने कहा—

**कहै राय सुनो गुरुदेवा । मोकहँ राखहु चरण की सेवा ॥**

**मस्तक मोर दीजिये हाथा । तौ अघ करमी होऊँ सनाथा ॥**

**छोड़ो सहस बीस मैं हाथी । अब मैं चलौं तुम्हारे साथी ॥**

**अब हम दौलत छाड़ै तुरंग । छोड़ो सकल कामिनी संग ॥**

**देह गर्व औ राज गुमाना । छोड़हु सकल भक्ति मनमाना ॥**

**जब तुम अमृत वचन पुकारा । तेहि क्षण छूटा सकल विकारा ॥**

कहा कि मुझे अपने चरणों की सेवा में रख लो, मेरे सिर पर अपना हाथ रखकर मुझ पापी को सनाथ कर दो। मैं बीस हजार हाथी, धन-दौलत, स्त्री आदि का मोह छोड़ कर आपके साथ चलूँगा। मैं देहमद, राजमद को छोड़ कर भक्ति में मन लगाऊँगा। जब आपने मुझसे अमृत समान वचन कहे थे, उसी क्षण मेरे सब विकार छूट गये थे।

यह सुन साहिब ने कहा कि अब मैं तुम्हें नाम दूँगा, जिससे जीव काल से बच पाता है। अब राजा ने कहा—

**अब जनि मोसन करहु दुराई । आपन कर लीजै मुक्ताई ॥**

**यहि संसार नाहिं मम काजा । दारुण महा काल है राजा ॥**

**अब तुम आपन लोक दिखाओ । महा पुरुष का दर्श कराओ ॥**

कहा कि अब आप मुझसे छिपाव न करें, मुझे काल से बचा लें।

इस संसार में मेरा कोई काम नहीं है, क्योंकि इस संसार का राजा काल है। आप मुझे अपना लोक दिखाओ, परम पुरुष के दर्शन कराओ।

तब साहिब ने राजा की 9 रानियों, 50 बेटों, एक बेटी सबको नाम दिया और अमर लोक लेकर गये।

**जेते जीव परवाना पाये। तेते हंस लोक सिधाये॥**

**काया छोड़ हंस चले आगे। सत्य सुकृत के चरनन लागे॥**

**सुकृत सागर पहुँचे जायी। अहो हंस तुम लेहु नहायी॥**

**सकल हंस मिलि पैठ नहावा। निरखै द्वीप द्वीप का भावा॥**

**देखहिं लोक लोक की रचना। तब टेके सुकृत के चरना॥**

**बैठे लोक महँ हंस निहारा। जहवाँ पुरुष आप विस्तारा॥**

**सकल हंस तहँ बैठे पांती। सोरह रवि हंसन की कांती॥**

**राजा कीन्ह दण्डवत जबहीं। रानी पुत्र कीन्ह पुनि तबहीं॥**

**अब नहिं भवमहँ जाउ लिवायी। अति आनन्द बहुत सुख पायी॥**

जिन-जिन जीवों ने साहिब से नाम पाया, उन सबको साहिब अपने साथ अमर लोक लेकर चले। सुरति के सागर में पहुँच सब हंसों ने वहाँ स्नान किया, फिर अमर लोक पहुँच वहाँ के सब द्वीपों को देखा। फिर सब साहिब के चरण पकड़कर एक पंक्ति में बैठ गये, उनका प्रकाश 16 सूर्यों का था। तब राजा सहित सब पुत्रों ने साहिब को दंडवत किया। राजा ने साहिब से विनती की, कहा कि अब वे भवसागर में नहीं जाना चाहते, यहाँ उन्हें बहुत आनन्द मिल रहा है। तब साहिब ने कहा—

**सुकृत उत्तर कहै समझायी। चलू राय गहिर जनि लायी॥**

**जो तुम गहर लगावहु राजा। विनशे ठाट तब होय अकाजा॥**

**तब पछतैहो राय भुपाला। ततक्षण वेगि चलो यहि हाला॥**

कहा कि अब जल्दी से वापिस चलो। यदि तुमने देर की तो तुम्हारा सब ठाट समाप्त हो जाएगा और तुम पछताओगे। फिर राजा ने कहा—  
**विनशे ठाट होय जरि छारा। अब नहिं छोडब चरण तुम्हारा॥**  
**ऐसा लोक छोड़ि नहिं जायब। बार बार तुहि माथ नवायब॥**

कहा कि चाहे सब ठाट नष्ट हो जाए, पर अब मैं आपके चरण नहीं छोड़ूँगा। मैं आपको बार-बार मस्तक नवाता हूँ, ऐसे लोक को छोड़कर मुझसे अब वापिस नहीं जाया जाता।

**चार दिना ऐसेहि चलि गयऊ। राजा खबरि कोई नहिं दयऊ॥  
तबै पौरिया राव पहँ जायी। महल देखि कोई नाहिं रहायी॥  
रोवत गयउ पौरिया द्वारा। जाय सबन सों कीन्ह पुकारा॥  
जाति कुटुंब सब देखन आये। जिन राजा ते बहु सुख पाये॥**

चार दिन ऐसे ही बीत गये और राजा की कोई खबर न पड़ी तो द्वारपाल राजा के पास आया, देखा कि कोई भी जिंदा नहीं बचा था। वो रोता हुआ चला और सबको जाकर बताया। सब रिश्तेदार और राजा के अहसानमंद देखने को आए। तब द्वारपाल सबको बताने लगा—

**कहै पौरिया सुनो दिवाना। तुम हम बूझो हम सब जाना॥  
जिंदा एक नगर में आया। तासों राजा कौन फुँकाया॥  
कह्यो राय मैं बहुत चिताई। तुरतहिं जिंदा कहँ मरवायी॥  
राजा बात नहीं पतियावा। वचन सुनि राजा मोहि रिसावा॥  
राजा कहै मुक्ति कर दाता। अस नहिं जाने करै निपाता॥  
मोर कहा माना न भाई। जस कीन्हा तस फल नित पाई॥**

द्वारपाल ने कहा कि मुझसे पूछो, मैं सब जानता हूँ। कोई जिंदा यहाँ आया था, उसने राजा को बहकाया था, मैंने राजा को बहुत समझाया था कि इसे मरवा दो, पर राजा ने मेरी बात नहीं मानी, मुझसे नाराज हो गये और कहा कि मुक्तिदाता हैं। अब उसी का फल पाया है। इस तरह कोई भी भेद को नहीं जान पाया।

**सुकृत अंश न पाइया, अंधे गये भुलाय॥**

**धन्य राय भोपाल है, गहे शब्द चित लाय॥**



## 8. दसों दिशाओं में लगी आग

साहिब कह रहे हैं कि दसों दिशा में आग लगी हुई है। क्या सच में दसों दिशा में आग लगी हुई है? देखते हैं कि यह कैसी आग है। यह आग नज़र नहीं आ रही है। धर्मों में धर्माधता आ गयी है। महापुरुषों की वाणी में रहस्य भरा है। शताब्दियों पहले मानव-समाज को जाग्रत किया कि धर्म क्षेत्र गलत लोगों के हाथ चला गया है, धीरे-धीरे यह गलत लोगों के हाथ पहुँच गया है। इसलिए मनुष्य धर्माधता की तरफ चल रहा है और एक दूसरे को मिटाने में लगा है। तभी तो कह रहे हैं—

**दसों दिशा में लगी आग, कहैं कबीर कहाँ जइयो भाग ॥**

यथार्थ में समस्या बड़ी है। हम सब शांति की खोज में चल रहे हैं। जब भी दूषित भोजन खाते हैं तो पेट में संक्रमण हो जाता है। जब भी दूषित पानी पीते हैं तो यकृत संबंधी रोग हो जाते हैं। जब भी हम गलत वातावरण में जीते हैं, प्रदूषित वातावरण में जीते हैं तो फेफड़ों पर, मस्तिष्क पर असर पड़ता है। दिल्ली, कलकत्ता में चले जाओ तो स्वाँस लेना भी दूभर हो जाता है, कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि दूषित वायु ग्रहण करते हैं।

इसी तरह धर्म में संक्रमण होता है तो हमारी सोच, क्रिया, व्यवहार में असर पड़ता है। धर्म क्षेत्र बहुत दूषित हुआ। यह सामने नज़र आ रहा है। क्योंकि आज हम सब नितांत दूषित धार्मिक वातावरण में जी रहे हैं। गंभीरता से चिंतन करने की ज़रूरत है। ऐसा क्यों? क्योंकि सभी धर्मों की बागडोर गलत हाथों में आती जा रही है। इसमें राजनीति, व्यवसाय, रोमांस आदि बहुत आ गया है, अपराधी लोग इसमें आ गये। महापुरुषों ने आगाह किया। बाहरी भक्तियों में दूषण लग रहा है। क्या इसका समाज पर असर पड़ा है ? आदमी ठगी, छल-कपट, कुकर्म, चोरी आदि से नहीं डर रहा है।

दो धर्मों के बीच लड़ाई होती है तो कई लोग मारे जाते हैं। यह है धर्माधता। क्या मिटने का रास्ता बताता है धर्म? नहीं, धर्म तो अमरत्व की ओर ले चलता है, पर दूषण आ गया। साहिब ने धार्मिक कुरीतियों पर प्रहार किया, लोगों को आगाह किया कि बचो, सावधान हो जाओ। मनुष्य अनात्म भक्तियों में शांति की खोज करने लगा। मुंबई में शांति सम्मेलन हुआ तो इस विषय पर बात हुई कि शांति कैसे स्थापित हो। अच्छे-अच्छे धर्मवेत्ता इकट्ठा हुए। सभी ने भक्ति के विषय में कहा। विश्व में शांति कैसे स्थापित हो, सबने इस विषय पर अपने सुझाव दिए। कोई शुभ कर्मों की तरफ प्रेरित कर रहा था, कुछ ने विचार रखा कि माँस न खाएँ, यह ठीक नहीं है, इससे बुद्धि पर असर पड़ता है। कुछ ने कहा कि नशाबंदी लागू करें समाज में। इससे गलत कार्य हो रहे हैं। अपने-अपने भाव से लोगों ने अपने विचार रखे। पर क्या इस तरीकों से समाज सुधरेगा? हम नकारात्मक बात नहीं कर रहे। पर क्या ये सुधार प्रयाप्त हैं मनुष्य में बदलाव लाने को। सुझाव तो बहुत अच्छे हैं, पर क्या इनसे व्यक्ति का व्यक्तित्व बदलेगा?

एक जगह नाम दान हो रहा था तो कुछ लोग इकट्ठा थे। हम नाम देते हैं तो सात नियम बताते हैं—सत्य बोलना, माँस न खाना, शराब न पीना, चोरी न करना, जुआ न खेलना, चरित्रवान रहना, हक की कमाई खाना। एक ने प्रार्थना की, कहा कि आपने सात नियम बताए। महाराज, मेरी एक शंका है कि अगर मुझमें क्षमता होती कि इन नियमों पर चल सकता तो आपके पास क्यों आता! मैंने कहा—शाबाश! तुम्हारी बात में वज्र है। इनपर अनुकरण की शक्ति दी जाएगी। इसे कहते हैं—आध्यात्मिक शक्ति।

इस मनुष्य से गलत काम कराने वाली सत्ता मामूली नहीं है। पहले देखते हैं कि व्यक्ति गलत काम क्यों कर रहा है। आत्मा का व्यवहार तो ऐसा नहीं है। पर मानव के अंदर कुछ ऐसी ताकतें हैं, जो यह सब करवा रही हैं। इनका प्रेरक मन है। कुछ कहते हैं कि बहुत हैं मन।



नहीं—ऊधो, मन नहीं दस बीस। यह एक ही है। इसकी कल्पनाएँ अनेक हैं। साहिब भी कह रहे हैं—

**कबीर मन तो एक है , भावे जहाँ लगाय।**

**भावे गुरु की भक्ति कर, भावे विषय कमाय।।**

अनेक नहीं बोल रहे हैं। इच्छाएँ अनंत हैं, मन एक ही है। इसने ही आत्मा को जकड़ा है। इसलिए अशांति है, मारकाट है। संसार में हिंसा क्यों है, अशांति क्यों है, इसकी जड़ की ओर चलना है। कारण एक ही है—मन। बड़ा विशाल है मन। जितनी भी इच्छाएँ हैं, मन की हैं, जितने भी फैसले हैं, मन के हैं। कभी-कभी आपके फैसले गलत निकल आते हैं। जो कुछ भी याद है, मन से है। चित्त इसी का रूप है। फिर जितनी भी क्रियाएँ हैं, मन है। मन का स्वरूप विशाल है। जीवन की जो घटनाएँ हैं, उनका निगेटिव चित्त के अंदर है। जीवन की सभी इच्छाएँ आपको याद हैं। आपके अंदर एक इच्छाकोश है। चित्तकोश भी है। वैज्ञानिक कह रहे हैं कि दो खरब बातें आप एक समय में याद रख सकते हैं। दूसरा मन की वृत्तियाँ भी बड़ी खतरनाक हैं। यही अशांति है विश्व में। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के कारण ही सारे अनिष्ट काम हो रहे हैं। मनुष्य में काम बढ़ गया, क्रोध बढ़ गया। हृदय क्षेत्र बहुत दूषित हो गया मन के द्वारा। आप हाथ से बोरी उठाते हैं तो केवल हाथ की ताकत नहीं लगी इसमें। टांगों की, दिमाग की, बाजुओं की, कंधों की, छाती की, पूरे शरीर की ताकत लगी। कौशिकाएँ एक दूसरे से जुड़ी हैं। इसी तरह मन की पूरी टीम है, सहयोग देते हैं एक दूसरे को। काम हारने वाला होता है तो क्रोध आ जाता है साथ देने। क्रोध हारने वाला होता है तो लोभ आ जाता है। फिर सब मिलकर हमला बोल देते हैं।

.....तो वहाँ जब सुझाव रखे जा रहे थे तो एक ने भी इस आध्यात्मिक शक्ति का जिकर नहीं किया। यही तो रहस्य है। साहिब ने कहा—

**पुरुष शक्ति जब आन समायी। तब नहीं रोके काल कसाई।।**

किसी महात्मा की निंदा नहीं कर रहा हूँ। हमारा किसी से बैर ही नहीं है। हम तो शांति की बात कर रहे हैं। मैंने मिसाल भी दी। 2000 लोग हमला करने आए, हमने कोई कार्रवाई नहीं की। मेरे पास 10,000 लोग थे, माइयों ने भी पत्थर उठा लिए थे, एक इशारा होता तो टूट पड़ते। पर हम खुद यह काम करेंगे तो अंतर क्या रहेगा! 11 आश्रम जलाए गये, पर हम झगड़ा करें तो यह ठीक बात नहीं है। हमने उदाहरण दिया। हमारा लक्ष्य भक्ति है। इसमें हमें शरारती तत्व रुकावटें देता है। जिन-2 ग्राउण्डों में हमारे प्रोग्राम होते थे, उन सबको धीरे-2 सीज़ कर दिया। जम्मू में कोई जगह नहीं रह गयी, जहाँ महात्मा सत्संग कर सके। बाकी को किसी-न-किसी तरह जगह मिल जाती है, पर जब हमारा आवेदन जाता है तो कोई-न-कोई बहाना लगाकर टाल देते हैं। खैर, यह उस तपके का काम है, करने दो। हमारा अपना तरीका है।

मुझे आस्था चैनल वालों का फोन आया, कहा कि जम्मू से हमें फोन आया कि इनका प्रोग्राम मत दो, इनकी बातें विरोध वाली हैं। मैंने पूछा कि आपने क्या कहा? कहा कि हमने कहा कि हमें तो देना है, हमारा तो व्यापार है, हमें पैसे लेने हैं। यानी वहाँ भी नहीं आने देना चाहते हैं। आप देखें कि मीडिया भी हमारे बड़े-2 प्रोग्राम की खबरें नहीं देता है। हालांकि हमें कोई परेशानी, कोई भय नहीं है। पर सावधानी तो बरतनी है।

हमारी हाज़िरी, हमारी संगत, संगत की मजबूती देखकर वो परेशान होते हैं। मुझे खुशी है कि हमारी संगत नेताओं वाली नहीं है, हमारी संगत बाबों वाली नहीं है, शास्त्रियों वाली नहीं है। हमारी संगत आस्था वाली है, प्रेम वाली है। तूफान होगा, बारिश होगी, कुछ भी होगा, तो भी पहुँचती है। हमारी हाज़िरी कमाल की होती है हर बार। बस, यही देखकर तो वे परेशान हैं। हम उनके खिलाफ अपनी ताकत नहीं लगा रहे, पर उनके दिमाग में ऐसा है, हमारे में नहीं है। हम कह रहे हैं कि आप अपना काम करें, हम अपना करें।

.....तो जहाँ-2 हमने सत्संग दिया, वहाँ-2 परेशानी दी। परेड़ गराऊंड में सत्संग होते थे बहुत। जब हमने दिया तो बहुत लोग इकट्ठा हुए। फिर वहाँ भी अटकलें दी जाने लगीं। फिर हमने रानी पार्क में दिया, फिर सतवारी ग्राउण्ड, फिर गाँधी नगर (दशहरा ग्राउण्ड), फिर जम्बू लोचन हाल।

मेरा लक्ष्य जम्मू में ही साहिब की भक्ति को फैलाना नहीं है, केवल भारत में भी नहीं बल्कि पूरे विश्व में इस भक्ति को फैलाना है। जब भी आप लक्ष्य बढ़ा रखेंगे तो आपकी क्षमता बढ़ जायेगी। लक्ष्य बढ़ा रखें। एक माई, कहा कि मेरी बेटी 12वीं में से पास हो गयी है। लड़की बहुत खुश थी। मैंने लड़की से पूछा कि कौन-सी डिवीजन आई? कहा कि बस पास हो गयी हूँ, वैसे तीसरी डिवीजन आई है। यानी उसका लक्ष्य ही पास होना था। फिर एक बार एक लड़का आया, बहुत दुखी था, रो रहा था, मैंने पूछा कि क्या बात है? कहा कि तीसरी पोलीशन आई है। जिसकी पहली पोलीशन आई है, वो लड़की है। मेरे साथ पक्षपात हुआ है, मेरे जानबूझ कर चार नंबर कम किए गये हैं। उसका लक्ष्य ऊँचा था। एक तीसरी डिवीजन में खुश थी तो एक पहली पोलीशन में रो रहा था। तो हमारा लक्ष्य भी पूरी दुनिया तक है। जितनी देर जीना है, जी लेंगे, चलना होगा तो चल पड़ेंगे।

.....तो विरोधी तपके ने सतवारी में भी रोकना शुरू किया। सुरक्षा का बहाना लगाकर बंद करवा दिया गया। मैंने गाँधी नगर में शुरू किया। वहाँ 16 हजार ग्राउण्ड का चार्ज है। पर धीरे-2 वहाँ भी सीज़ कर दिया। ईर्ष्या से सीज़ कर दिया। सब ग्राउण्ड सीज़ कर दिये। वो हमें कहीं भी टिकने नहीं देना चाह रहे हैं।

हम हिंसक नहीं हैं। एक बदलाव लाना चाहते हैं। कभी कुछ लोग मेरे नामियों से सवाल करते हैं कि इतना पैसा कहाँ से आता है? मेरा एक आसान-सा सवाल है। मैं पूछना चाहता हूँ कि आपके पास जो पैसा आया, वो कहाँ गया? वो तो अपने घर में ले जाते हैं, खुद खा रहे हैं। मैं

तो आश्रमों में लगा देता हूँ, संगत की सेवा में लगा देता हूँ, भण्डारों में लगा देता हूँ।

तो अगर यही सिलसिला चलता रहा, आगे अधिक दिक्कत हुई तो फिर ऐसा करेंगे कि रैली निकालते हुए रखबन्धु में प्रोग्राम देंगे। पर यह सिलसिला रुकेगा नहीं। जो हमारे लोगों को तंग करते हैं, उनको जवाब देने के लिए शांति रैली निकालेंगे।

मेरी पूँजी तो फिक्स है। वो है, संगत का प्रेम, संगत की रुहानियत, संगत का विश्वास। मेरा लक्ष्य कोई शाहजहाँ की तरह ताजमहल खड़ा करना नहीं है। ये आश्रम तो आपके लिए बना रहा हूँ। मेरी इसमें बिलकुल भी रुचि नहीं है। मैं तो केवल संगत को चेतन करना चाहता हूँ। उत्तम काम यही है। इस शरीर को तो बँधक मानता हूँ। जितनी रुहानियत मेरे नामियों में मिलती है, उतनी कहीं नहीं मिलती। मैं कभी अकेला नहीं माना अपने को। रंग लाजवाब है।

**लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।**

**लाली देखन मैं गयी, मैं भी हो गयी लाल।।**

अगर कोई जबानी अहिंसा कर बात करता रहे तो काम नहीं बनेगा। व्यवहार में लाना होगा। मुंबई के शांति सम्मेलन में भी तो यही था। व्यवहार में आदमी कैसे सुधरेगा, कोई नहीं जानता था। यह बदलाव पोथियाँ पढ़ने से नहीं आयेगा। पूरे गुरु के नाम की ताकत से ही होगा।

एक काशी के प्रकाण्ड विद्वान आए। उनके पास देश के पण्डित लोग पढ़ने आते हैं। उन्हें मेरे पास एक अनपढ़ नामी लाया। वो लोगों की गायेँ, भैंसें चराकर अपना गुजारा करता है। वो उन्हें मेरे पास लाया तो केवल आचरण के बल पर। उसने आकर कहा कि पण्डित जी हमारे गाँव के हैं, बड़ें विद्वान हैं, बहुत बड़ें हैं, आपसे मिलना चाहते हैं। मैंने कहा कि अभी बैठो, सत्संग के बाद बात करूँगा। मैंने ऐसा इसलिए कहा कि 2 घण्टे के सत्संग में ही पूरा निचोड़ दूँगा, फिर बाद में बात कर लूँगा। जब सत्संग समाप्त हुआ तो बाद में मैंने कहा कि कहो, क्या

शंका है, क्या बात करना चाहते हैं? उसने कहा कि क्या बात करूँ, आपने तो शंका सारी खत्म ही कर दी। फिर उसने कहा कि यह आपका बंदा बड़ा लाजवाब है, इसकी वजह से ही मैं आया हूँ। कहा—यह तो महात्मा है। यह तो आत्म ज्ञानी है। हम जानते हैं कि झूठ बोलना पाप है, पर फिर भी कभी झूठ बोल देते हैं। पर यह किसी भी कीमत पर नहीं बोलता है। हम जानते हैं कि पराई स्त्री की तरफ नज़र रखना पाप है, फिर भी देख लेते हैं, पर यह नहीं देखता है। यह चरित्रवान भी बहुत है, चोरी नहीं करता, ठगी नहीं करता। किसी प्राणी को यह नहीं मारता, यह दयालु भी बहुत है। ऐसे दयालु पुरुष धरती पर बहुत कम होते हैं। इससे प्रभावित होकर ही मैं यहाँ आया हूँ। क्या बना दिया है आपने इसे!

भैया, हम बदल देते हैं। यह गाय चराने वाले की बात नहीं है, सबकी बात है। एक बालाकृष्णा मेरा नाई है। वो कहने लगा कि हमारी माँ ने हम चार बेटों को जन्म दिया, पर एक जैसा नहीं बना पाई। हमारे विचार आपस में नहीं मिलते हैं। पर आप सबको अपने जैसा बना देते हैं, अपना रंग चढ़ा देते हैं।

यह कमाल है। आप हमारा सान्निध्य छोड़कर नहीं जाना चाहते। कभी बंदगी में आप भूल कर देते हैं, निगाह नहीं मिलाते हैं। इससे ताकत मिलती है। निगाह मिलाना है।

**नैनों की कर कोठरी, पुतली पलंग बिछाय।**

**पलकों की चिक डारि के, पिय को लिया रिझाय।।**

सच्चाई यह है कि संगत कोई ध्यान, साधना नहीं करती, पर बदलाव है। आपको जिस दिन नाम दिया, आपको आत्म-ज्ञान दे दिया। आपको जीने का सही मजा आ रहा है। सबसे पहले नाम दिया तो एक काम किया कि मन और आत्मा को अलग कर दिया। पहले आप नशे में थे। यह नशा उतार दिया। जब आपके घर में दूसरा बच्चा आता है तो जो पहले वाला छोटा काकू होता है, उसे नहीं पता है कि कहाँ से आया? वो पूछता है तो आप कहते हैं कि भगवान ने दिया है। बाद में

बड़ा होने पर उसे पता चलता है। ऐसे ही जो नाम दिया, आपको नहीं पता है, बाद में मालूम पड़ेगा। आपमें बदलाव ऐसे ही नहीं आया। जो विरोधी शक्तियाँ आत्मा को जकड़ी थीं, उनसे परे किया है।

एक समय आया कि कीड़ें बहुत हो गये। वैज्ञानिकों ने एक काम किया, कीटनाशक दवा बनाई। जब उसका छिड़काव किया तो वातावरण में भी उसका असर पड़ने लगा, धरती पर भी असर पड़ने लगा। वैज्ञानिकों ने देखा कि दूषण हो रहा है तो फिर छिड़काव करना बंद कर दिया। फिर उन्होंने हाई ब्रीड वाले बीज तैयार किये, बीज को सुरक्षित किया। उसको बो दो तो कीड़ा लगेगा ही नहीं। क्या है यह बीज? उन्होंने पहले छाँटा, देखा कि जो मरने वाला बीज था, उसे निकाल दिया, जो अंकुरित नहीं हो सकता था, उसे अलग किया। फिर उसे केमूडकॉलाइज़ किया। फिर उसे स्टोर में रखा। ऐसे तापमान में रखा कि अंकुरण खत्म न हो। फिर समय-2 पर उसका निरीक्षण किया, फिर छाँटा। अभी वो 1000 रुपये किलो है। आपको छिड़काव की ज़रूरत नहीं है। ऐसे ही हमने भी आपको ऐसा छिड़काव किया है कि भूत लगेंगे ही नहीं, रोग नहीं लगेंगे, मन नहीं लगेगा। क्यों नहीं? क्योंकि आपको सुरक्षित कर दिया। पर हमने भी आपको छाँटा। उदाहरण के लिए जिसकी आँख में काला तिल है, उसको नाम नहीं देता हूँ। जिसका सिर छोटा, डरावना हो, उसको नाम नहीं देता हूँ। आपको ठीक से समझ नहीं पाया तो फिर आँख बंद की, अपने कम्प्यूटर में गया। वहाँ से सिगनल आया कि ठीक है तो नाम दिया। ऐसे में छाँट कर दिया है नाम। अब आप सुरक्षित हुए, पर नियम बताए। यदि बीज को धूप में रख दो तो अंकुरण समाप्त हो जाएगा। इसलिए नियमों पर चलना, साहिब सुरक्षा देता चलेगा। जहाँ गलती होगी, वहीं दण्ड मिलेगा। शरणागत के नियम का पालन करना।

यहाँ जलबीर, डायन आदि ज़्यादा है। माँ भूमि की तरह है। कुछ पेड़ हर साल फल देते हैं। ऐसे ही कुछ माइयाँ सेहतमंद हैं, हर साल बच्चे को जन्म दे सकती हैं। पर कुछ कमज़ोर हैं, जीवन में एक बार ही दे पाती हैं। तो जब किसी को एक साल बच्चा नहीं होता तो सयाने के

पास ले जाते हैं। ये बहुत बड़े व्यापारी घूम रहे हैं। इसलिए मैं व्याह भी खुद करवा रहा हूँ।

एक नामिन थी। वो बचपन से मेरे पास आती थी। उसका व्याह हुआ तो बसोली चली गयी। दो साल बाद वो मेरे पास आई। मैं तो उसे पहचाना ही नहीं। उसकी गोद में एक लड़की थी। उसने अपनी दासतां सुनाते हुए कहा कि मेरी सास बहुत बुरी है। ससुर भी बड़ा जालिम है। मुझे कहीं सयाने के पास, कहीं फाँड़े वाले के पास ले जाते थे। मैं नहीं जाना चाहती। कहीं बकरे की बलि, कहीं कुछ। मैं दुखी हो गयी। साहिब जी, मैं आपको नहीं छोड़ सकती। दुखी होकर मैंने फालगा लिया। एक घण्टा गुरु जी, वहाँ ही लटकी रही, फिर घर वालों ने देखा तो नीचे उतारा। पर मैं जीना नहीं चाहती थी, इसलिए मैंने चूहे मारने वाली दवा खा ली। तो भी कुछ नहीं हुआ। फिर मैंने मिट्टी का तेल डाला और माचिस जलाने लगी। गुरु जी, सारी तिल्लियाँ खत्म हो गयीं, पर आग नहीं लगी।

वो परेशान थी। हम परेशान नहीं होने देते हैं। मैं चाहता हूँ कि आप परेशान न हों। आपसे बहुत गहराई से जुड़ा हूँ। आप सबसे समभाव से रहना चाहता हूँ। आप सब ही तो मेरे बच्चे हैं। कभी-2 आप कहते हैं कि गुरु जी, हमारा आपके सिवा कोई नहीं है। तो मैं कहता हूँ कि मेरी बात भी तो सुनो। मेरा भी आपके सिवा कोई नहीं है।

मेरे पास बड़ें-2 लोग भी आते हैं। एक ने कहा कि बड़ें लोगों के लिए कोई वी.आई.पी. जगह हो तो बहुत आयेंगे। गरीब लोगों के साथ बैठना पड़ता है, इसलिए कम आते हैं। मैंने कहा कि यदि अमीरों को वी.आई.पी. बना दूँगा तो फिर गरीबों में हीन भावना आ जायेगी। फिर मैंने कहा कि सच तो यह है कि मेरे पास सभी वी.आई.पी. हैं। तुमने कोठी वालों को, कारों वालों को वी.आई.पी. समझ लिया, पर सच यह है कि मेरे सभी नामी वी.आई.पी. हैं, फिर किसके लिए अलग से जगह रखूँ, इसलिए सभी के लिए एक ही जगह है। क्योंकि—**जिसका पूर्व**

**लिखिया, सो गुरु चरण गहे ॥** जिनकी जन्म-जन्मांतर की भक्ति साथ है, वे ही मेरे पास आ रहे हैं। कभी हम किसी के गंदे, फटे हुए कपड़ें देखकर बदतमीजी कर देते हैं, कभी किसी के अच्छे कपड़ें देख उसको इज्जत देते हैं। यह भूल है। मुझे किसी के धन से, किसी की ताकत से, किसी की विद्या से झिझक नहीं होती। मैं उसे पहले पढ़ता हूँ कि किस प्लेटफार्म पर खड़ा है। मैं मानता हूँ कि किसी की भी पढ़ाई मुझसे अधिक नहीं है। क्योंकि—

**कबीर एको जानिया, तो सब जाना जान।**

**कबीर एक ना जानिया, सब जाना जान अजान ॥**

.....तो आपके साथ अमोलक खजाना दिया, आपको बदल दिया।

**सद्गुरु मोर रंगरे ज, चुनरि मोरी रंग डारी।**

**शाही रंग छुड़ाया, दिया मजीठा रंग ॥**

धर्मवेत्ता जिन साधनों के कल्याण की कामना कर रहे हैं, वो ठीक नहीं है। कभी कहते हैं कि फलाना अच्छा है। नहीं, पढ़ने में भूल होती है। **नाम बिना सब नीच बखाना ॥** जब तक नाम नहीं है, अच्छा नहीं हो सकता है मनुष्य। क्रोध को चालाकी से मोटे रूप से काबू में कर सकते हैं, पर सूक्ष्म रूप से नहीं कर सकते। नाम रूपी आध्यात्मिक ताकत के बिना ही दसों दिशा में आग लगी हुई है और नाम ही इस आग को शांत कर सकता है।



**काग पलट हंसा कर देना,  
ऐसा पुरुष नाम में दीना ॥**